MAHY-114 ýHkkx&2ü

भारत का राजनैतिक इतिहास :
घटनायें एवं प्रक्रियाएँ

(1206 ई0–1947ई0)

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – 1

भारत का राजनैतिक इतिहास–घटनाएं एवं प्रक्रियाएं (106 ई. से 1947 ई.)

इकाई – 1 **3–10**

औरंगजेब (1658–1707)

इकाई – 2 **11–18**

शिवाजी एवं मराठी का उत्कर्ष

इकाई – 3 **19–28**

उत्तरकालीन मुगल शासक एवं नये राज्यों का उदय

इकाई – 4 **29–34**

नादिरशाह एवं अहमदशाह अब्दाली की आक्रमण।

इकाई – 5 **35–42**

मुगलों का पतन मुगल/साम्राज्य का पतन

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश प्रयागराज

परामर्श समिति — **MAHY-114**

प्रो0 सीमा सिंह — कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डा0 पी0पी0 दूबे — कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — आचार्य इतिहास एवं प्रभारी निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ सेराज मोहम्मद — आचार्य, इतिहास, श्री देवसुमन उत्तरखण्ड विश्वविद्यालय, गढ़वाल, उत्तराखण्ड

सम्पादक

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई 1–5)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2021

ISBN : 978-93-94487-88-8

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशक – कुलसचिव, **du|y fou; d|ekj]** उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 2024

मुद्रक– चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज

इकाई–1

औरंगजेब (1658–1707)

इकाई की रूप रेखा

1.0. उद्देश्य

1.1. औरंगजेब का प्रारम्भिक जीवन

1.2. औरंगजेब की धार्मिक नीति

1.3. इस्लाम विरोधी प्रथाओं पर प्रतिबन्ध

1.4. औरंगजेब एवं राजपूत

1.5. सिक्खों के साथ औरंगजेब के सम्बन्ध

1.6. मराठों के साथ सम्बन्ध

1.6. शाइस्ता खां की पराजय एवं पुरन्दर की संधि

1.7. औरंगजेब का चरित्र

1.8. औरंगजेब की नीतियाँ एवं उसके परिणाम

1.9. सारांश

1.10. अभ्यार्थ प्रश्न

1.11. सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0. उद्देश्य

इस इकाई में औरंगजेब के व्यक्तित्व एवं कार्यों के बारे मे विस्तृत जानकारी है। उसके सिंहासनारोहण से लेकर विजय अभियान का सविस्तार चर्चा की गई है। औरंगजेब के धार्मिक नीति तथा राजपूतों के सम्बन्ध में जानकारी दी गई है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे :–

- ❖ औरंगजेब की धार्मिक नीति
- ❖ औरंगजेब एवं राजपूतों के सम्बन्ध
- ❖ मराठों के साथ औरंगजेब के सम्बन्ध
- ❖ औरंगजेब का चरित्र
- ❖ औरंगजेब की नीतियाँ एवं उसके परिणाम

1.1. औरंगजेब का प्रारम्भिक जीवन

औरंगजेब, शाहजहाँ का तीसरा पुत्र था। उसका जन्म 1618 ई0 में उज्जैन

के निकट दोहद नामक स्थान पर मुमताज महल के गर्भ से हुआ था। जिस समय शाहजहाँ का अपने पिता के विरूद्ध विद्रोह असफल हुआ, उस समय दारा शिकोह और औरंगजेब को नूरजहाँ के पास बन्धक के रूप में रखा गया। जहाँगीर की मृत्यु के पश्चात उनको मुक्त किया गया। उसे आरम्भ से ही कठिन परिस्थितियों से गुजरना पड़ा था, इसलिए उसमें चरित्रक दृढ़ता और वीरता की भावना आती गई। उसकी शिक्षा की विधिवत व्यवस्था की गई। अरबी, फारसी, तुर्की एवं हिन्दी भाषाओं का उसे अच्छा ज्ञान था। सैनिक कला में भी वह निपुण था। शाहजहाँ ने उसे अनेक सैनिक अभ्यासों पर भेजा तथा प्रशासनिक जिम्मेदारियां सौंपी। 1636 ई0 मे वह पहली बार दक्षिण का सूबेदार बनाया गया। इस पद पर रहते हुए उसने अपनी सैनिक एवं प्रशासनिक प्रतिभा का परिचय दिया। निसंदेह उसने मुगल सत्ता की जड़ें दक्षिण में मजबूत की। 1644 ई0 में वह गुजरात का 1648 ई0 में मुल्तान और सिंध का तथा 1652 ई0 में पुनः दक्षिण का सूबेदार बना। 1657 ई0 में शाहजहाँ के बीमार पड़ते ही उत्तराधिकार का युद्ध आरम्भ हो गया। औरंगजेब ने भी इस युद्ध में भाग लिया एवं अपनी कूटनीति एवं रणकौशल के बल पर विजयी हुआ।

1.2. औरंगजेब की धार्मिक नीति

औरंगजेब की धार्मिक नीति एक विवादास्पद विषय है। अनेक यूरोपीय और भारतीय इतिहासकारों ने औरंगजेब को एक धर्मांध शासक के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है। उनके अनुसार, अकबर की धार्मिक सहिष्णुता की नीति त्यागकर औरंगजेब ने धर्मांधता की नीति अपनाई। धार्मिक कट्टरता से वशीभूत होकर उसने गैर–इस्लामी धर्मवालों पर अत्याचार किये, जिसके परिणामस्वरूप राज्य में अनेक विद्रोह हुए एवं मुगल सत्ता की जड़ें खोखली हो गयी। औरंगजेब की कट्टर धार्मिक नीति ने मुगल साम्राज्य के पतन में योगदान दिया। आधुनिक काल में अनेक विद्वान इसमत को स्वीकार नहीं करते। उनका तर्क है कि औरंगजेब ने सिर्फ गैर–इस्लामिक धर्मवालों के प्रति कठोर रवैया नहीं अपनाया बल्कि इस्लाम धर्म की अनेक कुरीतियों को भी बन्द करने का प्रयास किया। उसने हिन्दू मन्दिरों को तोड़ा ही नहीं बल्कि अनेक मन्दिरों एवं मठों को दान भी दिऐ। हिन्दू मनसबदारों की सख्या उसके समय में पहले से अधिक हो गयी। वस्तुतः औरंगजेब की अपनी कुल धार्मिक मान्यताएं थी एवं हिन्दू विरोधी कार्य वस्तुतः तत्कालीन राजनीतिक एवं आर्थिक कारणों से प्रभावित थे। इसलिए, उसपर धर्मांधता का आरोप नहीं लगाया जा सकता। सत्य दोनों के बीच है। वह न तो अति धर्मांध था और न ही अधिक उदार।

1.3. इस्लाम विरोधी प्रथाओं पर प्रतिबन्ध

औरंगजेब एक कट्टर सुन्नी मुसलमान था। उसने राजगद्दी कट्टरपंथियों की सहायता से प्राप्त की थी। अतः शासक बनते ही उसने कुरान के नियमों का कड़ाई से पालन करवाना आरम्भ कर दिया। जिससे **'दार–उल–हर्ब'** को **'दार–उल–इस्लाम'** में परिवर्तित किया जा सके। इसलिए उसने पहले से चली आ रही कुरान के नियम विरोधी अनेक प्रथाओं पर पाबन्दी लगा दी। उसने सिक्कों पर कलमा खुदवाना बन्द कर दिया, जिससे सिक्के विभिन्न हाथों में जाकर गन्दे न हो जाएं अथवा पैरों तले रौंद न जाएं। उसने नौरोज का त्योहार मनाना बन्द कर दिया, क्योंकि यह जरथस्ट्र सम्प्रदाय का त्योहार था। झरोखा दर्शन एवं तुलादान की प्रथा को भी इस्लाम विरोधी मानकर बंद कर दिया गया। इन्हे बन्द करने का

एक कारण यह भी था कि ये प्रथाएं अन्धविश्वास से प्रेरित थी और इनके कारण छोटे सरदारों पर आर्थिक पड़ता था।

औरंगजेब ने अपन शासन के ग्यारहवें वर्ष दरबार में गवैयों एवं संगीत एवं नाच–गाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। यद्यपि यह प्रतिबन्ध पूरी तरह व्यवहार में नहीं लाया जा सका। महल में नौबत एवं अन्य बजाए जानलेवा वाद्ययन्त्रों का प्रचलन बना रहा। हरम की स्त्रियों एवं प्रभावशाली सरदारों के घरों में नाच–गाना प्रचलित रहा। औरंगजेब स्वयं भी वीणा बजानें में दिलचस्पी रखता था। साथ ही, उसके समय में फारसी भाषा में भारतीय संगीत पर अनेक उच्च कोटि की पुस्तकें भी लिखीं गईं। नैतिक दृष्टिकोण से सम्राट ने गाँजा और अफीम छोड़कर अन्य मादक पदार्थों के उपयोग पर पाबन्दी लगा दी। शराब का निर्माण एवं इसकी खरीद – बिक्री बन्द कर दी गई। वेश्याओं और नर्तकियों को विवाह कर लेने अथवा साम्राज्य से बाहर निकल जाने के आदेश दिए गऐ। इसी प्रकार होली, महर्रम, बसन्तोत्सव जैसे त्यौहार, जुआँ खेलने, तिलक लगाने एवं मूर्तियों के रखने पर भी रोक लगाई गई। कब्रों को छत से ढकने, स्त्रियों को मजारों पर जाने, दाढ़ी और पजामों की लम्बाई निश्चित करने के भी आदेश निकाले गये।

औरंगजेब स्वयं भी कुरान के नियमों का कड़ाई से पालन करता था। अपने व्यक्तिगत जीवन को उसने नैतिक नियमों के अनुरूप ढाल लिया। उसका जीवन अत्यन्त सात्विक एवं सादगीपूर्ण था। वह नियम से नमाज पढ़ता था। युद्धक्षेत्र में भी वह इस नियम का उल्लंघन नहीं करता था। उसने जन्मदिन एवं राज्याभिषेक के अवसर पर किए जाने वाले भड़कीले आयोजनों को बन्द करवा दिया। भाँग, मदिरा, जुआ और अन्य बुराइयों से वह दूर रहता था। राजदरबार की भव्यता एवं आडम्बरता को समाप्त कर दिया गया। रेशमी वस्त्र एवं सोने–चाँदी के सजावट वाले सामानो को बन्द कर दिया। औरंगजेब के इन सादगीपूर्ण कार्यों से कट्टर मुसलमानों में उसकी छवि निखर गई एवं वह **'दरवेश अथवा जिन्दापीर'** के नाम से जाना जाने लगा।

1.4. औरंगजेब और राजपूत राज्य

मुगल शासको के समय में राजपूत उत्तर भारत की एक प्रमुख राजनीतिक शक्ति थे। बाबर से शांहजहाँ के समय तक मुगलों ने राजपूतों की शक्ति को कभी नजरअंदाज नहीं किया। राजपूत राज्यों की शक्ति एवं उनके राजनीतिक महत्व को देखते हुए अकबर ने परिस्थिति के अनुसार मैत्रीपूर्ण एवं वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये। विद्रोही राजपूत राज्यों को सैन्यबल के आधार पर भी साम्राज्य की छत्र–छाया में लाने का प्रयास किया गया। राजपूतों ने मुगलों की सेना एवं प्रशासन मे भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। औरंगजेब के सम्राट बनने के पूर्व और उसके कुछ वर्षों उपरान्त भी औरंगजेब और राजपूतों के सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण बनें रहे, परन्तु धीरे धीरे ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई जिससे मुगलों और राजपूतों के सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण के बजाय वैमनस्यपूर्ण हो गये।

मुगलों एवं राजपूतों के सम्बन्ध बिगड़ने का एक प्रधान कारण था उत्तराधिकार का युद्ध। इस युद्ध में राजपूतों ने दारा का पक्ष लिया, इससे औरंगजेब को उनकी स्वामिभक्ति में संदेह हुआ तथापि उसने मेवाड़ को अपने पक्ष में मिलाने की कोशिश की। राणा के मनसब में बढ़ोत्तरी की। जसवंत सिंह को क्षमा प्रदान कर गुजरात का प्रशासक भी बनाया गया। इसी प्रकार जयसिंह से भी औरंगजेब के सम्बन्ध मधुर बने रहे, लेकिन धीरे–धीरे मुगल–राजपूत सम्बन्ध बिगड़न लगे।

औरंगजेब की धार्मिक नीतियों से राजपूत मे अविश्वास की भावना पैदा हुई। वे मुगलों से अपने आपको स्वतंत्र करने के प्रयास में लग गये। औरंगजेब को भय था कि कहीं राजपूत मराठों के साथ मिलकर मुगलों की सत्ता समाप्त नहीं कर दें। 1678 ई0 तक प्रमुख राजपूत सेनानायकों, आमेर के जयसिंह और मारवाड़ के जसवंत सिंह की मृत्यु हो चुकी थी। इसलिए औरंगजेब ने राजपूत राज्यों पर अपना शिकंजा कसने का अभियान आरम्भ कर दिया। औरंगजेब की इस अदूरदर्शी नीति ने मुगल–राजपूत संघर्ष की एक लम्बी श्रृंखला आरम्भ कर दी जो अंततः मुगल साम्राज्य के अहितकर सिद्ध हुई।

1.5. सिखों के साथ औरंगजेब के सम्बन्ध

औरंगजेब के समय में मुगलों और सिखों के सम्बन्ध भी कटु बन गए। गुरूनानक ने सिख धर्म की स्थापाना की थी। अकबर के समय तक सिखों और मुगलो के सम्बन्ध मधुर बने रहे, परन्तु जहाँगीर से समय से मुगल–सिख सम्बन्ध कटु बनते गए। इसके पश्चात सिखों ने अपने आपको संगठित किया एवं मौका मिलते ही मुगलों से संघर्ष पर उतारू हो गये। शाहजहाँ से समय में हरगोविन्द और मुगल सैनिकों के बीच अमृतसर के निकट 1628 ई0 में युद्ध हुआ। जिससे वह अंततः पराजित हुआ। हरगोविन्द ने भागकर कश्मीर मे शरण ली। वहीं उसकी 1645 ई0 में मृत्यु हुई। सिख, मुगलों से विद्रोह कर कोई विशेष लाभ प्राप्त नहीं कर सके और न ही मुगल ही सिखों की शक्ति को हमेशा के लिए कुचल पाये। गुरू गोविन्द सिंह एक स्वतंत्र राज्य की स्थापना के अपने प्रयास को पूरा नहीं कर सके, परन्तु उन्होने सिखों में जो सैनिक भावना भर दी, उन्हे जिस प्रकार एक सिख शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया, उसका लाभ सिखों ने आगे चलकर उठाया। अगर औरंगजेब ने सिखों को अपना मित्र बनाकर रखा होता तो सम्भवतः उसे दखिण में कुछ सहायता मिली होती। सिखों के विद्रोह ने मुगलों की शक्ति एवं प्रतिष्ठा पर करारा आधात किया।

1.6. मराठों के साथ सम्बन्ध

दक्षिण भारतीय राजनीति में मुगलों के प्रबलतम प्रतिद्वंदी मराठे थे। मराठों की राजनीतिक उत्कर्ष शाहजी भोंसले और उनके पुत्र शिवाजी के अधीन हुआ। अहमदनगर एवं बीजापुर राज्यों की आंतरिक दुर्बलता का लाभ उठाकर उसने अपनी शक्ति बढ़ा ली। उसके कार्यों को उसके पुत्र शिवाजी ने आगे बढ़ाया। उसने राजगढ़, कोकण, जावली तथा पूना के आस–पास के क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया। उसका उद्देश्य दक्षिण में मुगलों का प्रसार रोकना और स्वतंत्र **'हिन्दू राज्य'** की स्थापाना करना था। बीजापुर राज्य और मुगलों के संघर्ष का लाभ उठाकर उसने मुगल इलाकों पर आक्रमण करना एवं लूटना आरम्भ कर दिया। उसने मुगल अधिकृत अहमद नगर एवं जुनार को भी लूटा। शिवाजी के बढ़ते आतंक से औरंगजेब चिंतित हो उठा, लेकिन उसके विरूद्ध कोई कार्यवाही नहीं कर सका। 1657 ई0 मे वह बीजापुर के शासक को शिवाजी पर नियन्त्रण आदे'ा देकर उत्तराधिकार के युद्ध में भाग लेने चला गया।

1.6.1. शाइस्ता खाँ की पराजय एवं पुरन्दर की सन्धि

दक्षिण से औरंगजेब की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर शिवाजी ने उत्तरी कोंकण, कल्याण, भिवंडी, माहुली एवं अनेक पहाड़ी दुर्गों पर अधिकार कर लिया।

1659 ई0 में शिवाजी ने बीजापुर सरदार अफजल खाँ को परास्त कर पन्हाला, दक्षिणी कोंकण और कोल्हापुर के अनेक स्थानों पर विजय प्राप्त की। सम्राट बनने के बाद औरंगजेब ने शिवाजी के प्रसार को रोकने के लिए 1660 ई0 मे दक्कन के सूबेदार शाइस्तां खाँ को आदेश दिया। उसने बीजापुर से समझौता कर शिवाजी पर आक्रमण कर दिया। पूना, चाकन और कल्याण पर मुगलों का अधिकार हो गया। इससे शिवाजी की शक्ति को क्षति पहुंची। अतः बीजापुर राज्य से समझौता कर उन्होने मुगलों के विरूद्ध गतिविधियाँ तेज कर दीं। 1663 ई0 में शिवाजी ने पूना में शाइस्ता खां के शिविर पर आक्रमण पर उसे घायल कर दिया। वह कठिनाई से भागकर अपने प्राणों की रक्षा कर सका। इससे शिवाजी की धाक पुनः जम गई। 1664 ई0 में शिवाजी ने सूरत के बन्दरगाह को भी लूट लिया। इस घटना से मुगल प्रतिष्ठा को ठेस पहुंची। क्रुद्ध औरंगजेब ने शाइस्ता खां दक्षिण से बंगाल भेज दिया एवं 1665 ई0 में आमेर के राजा जयसिंह को शिवाजी के दमन का आदेश देकर दक्षिण भेजा।

जयसिंह ने कूटनीति और सैनिक दोनों नीतियों का सहारा लिया। उसने बीजापुर के सुल्तान, शिवाजी के विरोधी मराठा सरदारों, जंजीरा सीदियों और यूरोपियनों को भी अपने पक्ष में मिला लिया तथा पुरन्दर पर घेरा डाल दिया एवं शिवाजी के शक्तिकेन्द्र राजगढ़ पर भी दबाव डाला। शिवाजी की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। इसलिए उसने जयसिंह से पुरन्दर की सन्धि (जून 1665) कर ली। इस सन्धि के अनुसार शिवाजी ने 4 लाख हूण वार्षिक आय वाले 23 किले तथा उसके आस–पास के क्षेत्र मुगलों को दिये। बालाघाट के इलाके के बदले में शिवाजी ने 40 लाख हूण देना भी स्वीकार किया तथा मुगल अधीनता स्वीकार कर ली। जयसिंह के अनुरोध पर शिवाजी ने 1666 मे औरंगजेब से मिलने आगरा गये, परन्तु दरबार में उचित सम्मान नहीं मिलसे से कुपित हो उठे। औरंगजेब ने उन्हे गिरफ्तार कर लिया, परन्तु वह कैद से अपने पुत्र के साथ भाग निकले एवं राजगढ़ पहुँच गये। 1670 ई0 में शिवाजी ने मुगलो के विरूद्ध पुनः संघर्ष आरम्भ कर दिया। अपने खोए हुए क्षेत्र एवं किला वापस लेने लगे। उसने सूरत को दूसरी बार लूटा। 1674 ई0 में रायगढ़ में शिवाजी ने अपना राज्याभिषेक भी किया। औरंगजेब इस समय सीमान्त प्रदेश में उलझा हुआ था। अतः चाहकर भी वह शिवाजी का दमन नहीं कर सका।

1.7. औरंगजेब का चरित्र

औरंगजेब, शाहजहाँ के सभी पुत्रों में सबसे अधिक योग्य था। यद्यपि उसकी विविध शिक्षा–दीक्षा नहीं हुई, तथापि कुशन का उसने गहन अध्ययन किया। अरबी, फारसी, तुर्की, और हिन्दी का भी उसने अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था। सैनिक गुणों मे अव अत्यन्त प्रवीण था। आरम्भ से ही उसने अनेक सैनिक अभियानों में भाग लिया। दक्षिण की सूबेदारी के दौरान उसने प्रशासनिक क्षमता का भी प्रदर्शन किया। उसके चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता थी उसका धार्मिक प्रवृत्ति का होना। वह इस्लाम के नियमों का कड़ाई से पालन करता था तथा इन नियमों का उल्लंघन होते हुए नहीं देख सकता था। वह नियमों से नमाज पढ़ता एवं सादा सात्विक जीवन व्यतीत करता था। वह आडम्बरों से कोसों दूर था। कहा जाता है कि अपने व्यक्तिगत खर्चे को वह टोपियां सिल कर तथा कुरान की नकल कर उससे होने वाली आय से पूरा किया करता था। अपने विरोधियों और दुश्मनों के प्रति कठोर नीति अपनाते हुए भी उसने अनेक अवसरों पर अपनी सहृदयता का परिचय दिया। अनेक कठिनाइयों के बावजूद जीवन भर उसने मुगल साम्राज्य की सुरक्षा की एवं उसे बिखरने से रोके रखा। यह उसकी बहुत बड़ी उपलब्धि थी।

1.8. औरंगजेब की नीतियाँ एवं उसके परिणाम :–

औरंगजेब में अनेक गुण रहने के बावजूद, चाहे–अनचाहे उसकी नीतियों ने मुगल साम्राज्य के विघटन और पतन की प्रक्रिया आरम्भ कर दी। उसकी धार्मिक नीति ने जिसे उसने राजनीतिक और आर्थिक कारणों से प्रभावित होकर भी लागू किया था, बहुसंख्यक हिन्दुओं के मन में प्रतिक्रिया उत्पन्न कर दी। वे औरंगजेब को हिन्दू विरोधी और अपना दुश्मन मानने लगे। मुगलों के प्रति उनकी स्वामिभक्ति और सहयोग की भावना समाप्त हो गई। वे उसे सिर्फ मुसलमानों का ही सम्राट मानने लगे और उसका विरोध करने की प्रवृत्ति उनमे तीव्र हो गई। धर्म को ही आधार बनाकर जाटो, सतनामियो, सिखों, राजपूतों, मराठों यहाँ तक की दक्कन की शिया रियासतों ने भी क्षेत्रीय स्वतंत्रता के लिए प्रयास आरम्भ कर दिया और मुगलों को परेशान करने लगे। इन शक्तियों को दबानेमें औरंगजेब की शक्ति एवं प्रतिष्ठा नष्ट हुई, फिर भी इन पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित नहीं किया जा सका। उसकी मृत्यु के साथ ही अनेक स्वतंत्र राज्यों की स्थापना हो गई। इस प्रकार हिन्दुओं का समर्थन और सहयोग खोना औरंगजेब की बहुत बड़ी राजनीतिक भूल थी। उसकी दूसरी बड़ी भूल थी राजपूतों का सहयोग खो देना। भारत मे मुगल सत्ता के सबसे स्थाई स्तम्भ राजपूत ही थे। अकबर ने जिस **'सुलह–ए–कुल'** की नीति द्वारा राजपूतों को अपना समर्थक बना लिया था, उसे औरंगजेब ने अपनी राजनीतिक अदूरदर्शिता एवं धार्मिक कट्टरपन से खो दिया। मेवाड़ और मारवाड़ से प्रारम्भ होकर राजपूतों का स्वतंत्रता संग्राम पूरे राजपूताना में फैल गया जिसे वह नहीं दबा सका। इसी प्रकार सिख और मराठे भी मुगलों के विरोधी बन गये।

1.9. सारांश

औरंगजेब मुगल साम्राज्य का अन्तिम महान शासक था। उसकी मृत्यु के साथ ही मुगल इतिहास का शानदार अध्याय समाप्त हो गया और पराक्रमी और वैभवशाली साम्राज्य तेजी से पतन के मार्ग पर अग्रसर हो गया। औरंगजेब का चरित्र एवं उसके कार्यकलाप अत्यन्त विवादास्पद है। कुछ विद्वान उसे क्रूर धर्मान्ध तथा अदूरदर्शी एवं अविवेकी शासक मानते है जिसने धार्मिक कट्टरता और गलत नीतियों के वशीभूत होकर मुगल साम्राज्य की जड़े खोद डाली। उनके अनुसार, मुगल साम्राज्य के पतन के लिए औरंगजेब ही मुख्यरूप से उत्तरदायी था। उसकी नीतियों ने साम्राज्य में विद्रोहों का तांता लगा दिया तथा प्रशासनिक एवं आर्थिक व्यवस्था नष्ट कर दी। एक शासक के रूप में औरंगजेब विफल रहा। औरंगजेब की नीतियों ने ही एक ऐसी प्रक्रिया को जन्म दिया, जिसमें मुगल साम्राज्य का संगठित रहना अत्यन्त कठिन था। इसलिए उसकी मृत्यु के बाद ही साम्राज्य के विघटन की प्रक्रिया आरम्भ हो गयी। मुगल साम्राज्य के पतन के लिए अन्य अनेक कारण भी थे, परन्तु औरंगजेब की नीतियाँ इसके लिए उत्तरदायीं नहीं थी।

1.10. सारांश

- ❖ औरंगजेब की धार्मिक नीति का वर्णन कीजिये।
- ❖ **"अपनी कट्टर धार्मिक नीति से औरंगजेब ने मुगलवंश के आधार को नष्ट कर दिया था"** क्या आप इस कथन से सहमत हैं ?

- ❖ औरंगजेब ने गैर–इस्लामिक प्रथा पर किस प्रकार प्रतिबन्ध लगाया, व्याख्या कीजिये।
- ❖ राजपूत राज्यों के साथ औरंगजेब का सम्बन्ध का विवेचना कीजिये।
- ❖ मराठों के साथ औरंगजेब के सम्बन्ध का विश्लेषण कीजिये।
- ❖ औरंगजेब के चरित्र का मूल्यांकन कीजिये।
- ❖ मुगलों के पतन के लिए औरंगजेब की नीतियाँ किस हद तक जिम्मेदार थी, व्याख्या कीजिये।

1:11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सर, यदुनाथ सरकार – फॉल ऑफ दि मुगल एम्पायर
2. सर, यदुनाथ सरकार – हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब
3. इनामदार, एन0एस0 – शहंशाह : द लाइफ ऑफ औरंगजेब
4. सतीश चन्द्र – मध्यकालीन भारत
5. वर्मा, हरीश चन्द्र – मध्यकालीन भारत भाग–2

इकाई–2

शिवाजी एवं मराठों का उत्कर्ष

इकाई की रूप रेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 षिवाजी का आरम्भिक जीवन

2.3 शिवाजी की आरम्भिक सफलताएँ

2.4 शिवाजी और मुगल

2.5 छत्रपति के रूप में शिवाजी

2.6 शिवाजी का प्रशासन

2.6.1. केन्द्रीय प्रशासन में राजा की स्थिति

2.6.2. अष्ट प्रधान

2.7 सैन्य संगठन

2.8 राजस्व व्यवस्था

2.9 प्रान्तीय एवं स्थानीय प्रशासन

2.10 सारांश

2.11 अभयार्थ प्रश्न

2.12 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0. उद्देश्य

इस इकाई में शिवाजी की महान व्यक्तित्व एवं कृतित्व के बारे मे जानकारी दी गई है। बाल्यावस्था से लेकर मराठों को संगठित करने की जानकारी है। शिवाजी की प्रशासनिक नीति एवं सैन्य क्षमता की चर्चा की गई है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे :–

- ❖ शिवाजी का प्रारम्भिक जीवन एवं कठिनाइयाँ
- ❖ शिवाजी का आरम्भिक सफलताएं
- ❖ शिवाजी एवं मुगलों के सम्बन्ध
- ❖ छत्रपति के रूप में शिवाजी के कार्य
- ❖ शिवाजी का प्रशासन – केन्द्रीय व्यवस्था
- ❖ अष्ट प्रधान के सम्बन्ध में

- ❖ सैन्य संगठन के सम्बन्ध में
- ❖ राजस्व व्यवस्था के सम्बन्ध में
- ❖ प्रान्तीय एवं स्थानीय प्रशासन सम्बन्धी जानकारियाँ

2.1. प्रस्तावना

मराठों के राजनीतिक उत्कर्ष एवं मराठा राज्य की स्थापान में शिवाजी का बहुमूल्य योगदान है। उन्होने शाहजी भोंसले द्वारा आरम्भ किए गए कार्य को (मराठों को संगठित करने का) आगे बढ़ाया तथा दक्षिणी रियासतों एवं मुगलों से संघर्ष कर एक स्वतंत्र मराठा राज्य की स्थापना की। शिवाजी भारतीय इतिहास में एक वीर योद्धा, विज्ञेता, कुशल राजनीतिज्ञ एवं प्रशासकों के रूप में विख्यात है। इतिहासकार सरदेसाई के अनुसार 'शिवाजी का व्यक्तित्व अपने युग में ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण आधुनिक युग में भी असाधारण है। अंधकार के बीच में वह एक ऐसे नक्षत्र के समान चमकते हैं। जो अपने समय से बहुत आगे था।

2.2. शिवाजी का आरम्भिक जीवन

शिवाजी मराठा सरदार शाहजी भोंसले के पुत्र थे। उनकी माता का नाम जीजाबाई था। शिवाजी का जन्म 20 अप्रैल 1627 को पूना के निकट शिवनेर मे हुआ था। शाहजी ने अहममद नगर राज्य में एक सैनिक के रूप में अपना जीवन आरम्भ किया, परन्तु अपनी योग्यता के बल पर वह लगातार प्रगति करते गये और जागीरदार बन गये। अहमदनगर और बीजापुर राज्यों में उनका प्रभाव बहुत अधिक बढ़ गया। पूना की जागीर पहले उन्हे शाहजहाँ से प्राप्त हुई थी। बाद में बीजापुर राज्य की मुगल विरोधी नीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर उन्होने अपना प्रभाव क्षेत्र बढ़ाना आरम्भ किया।

शाहजी ने शिवाजी की शिक्षा–दीक्षा की आरम्भ से ही उत्तम व्यवस्था की। शिवाजी के आरम्भिक जीवन पर उनकी माता जीजाबाई और गुरू कोणदेव के व्यक्तित्व का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। जीजाबाई शाहजी की परित्यक्त पत्नी थी, इसलिए उनमें धार्मिकता और स्वाभिमान की भावना बहुत अधिक थी। शिवाजी पर अपने माता के

आदेशों का व्यापक प्रभाव पड़ा। वे धर्मपरायण, वीर और साहसी बन गये। शिवाजी के गुरू कोणदेव ने उनकी शिक्षा का भार अपने ऊपर पढ़ने लिखने के अतिरिक्त उन्हे घुड़सवारी, तीरंदाजी एवं युद्ध कौशल तथा रणनीति में निपुण बना दिया। सैन्य संगठन और प्रशासन सम्बन्धी शिक्षा भी उन्हे की गई। इस आरम्भिक शिक्षा तथा चारित्रिक गुणों के विकास का उनके जीवन पर आगे गहरा प्रभाव पड़ा। गुरू रामदास ने भी शिवाजी को प्रभावित किया। उनके उपदेशों से शिवाजी में स्वाभिमान और राष्ट्र–प्रेम की भावना का विकास हुआ।

अल्पायु मे ही शिवाजी का विवाह साई बाई से कर दिया गया। शाहजी ने उन्हे पूना की जागीर का प्रबन्ध भी सौंप दिया और स्वयं बीजापुर राज्य में चले गये। शिवाजी ने अपनी जागीर का प्रबन्ध करना आरम्भ कर दिया। जागीर की व्यवस्था के साथ–साथ मावल प्रदेश के नवयुवकों को संगठित कर उनमें देश प्रेम की भावना भी आरम्भ किया। मावलियों की सहयोग से उन्होन पूना के निकटवर्ती दुर्गों को अपने अधिकार में लेना आरम्भ किया। उनके गुरू कोणदेव उन्हे इन

दुःसाहसिक कार्यों से दूर रहने की सलाह देते थे, परन्तु उन पर कोई विशेष असर नहीं पड़ा। उनके पिता ने भी उन्हे पूना से बीजापुर ले जाने की योजना बनाई। शिवाजी बीजापुर गये भी परन्तु अपने दबंग व्यवहार से सुल्तान को क्रुद्ध कर दिया। इसलिए शाहजी ने उन्हे वापस भेज दिया।

आरम्भ से ही शिवाजी का उद्देश्य एक स्वतंत्र मराठा राज्य की स्थापना करना था। गुरू रामदास के आदर्शों से प्रेरणा लेकर वह महाराष्ट्र को मुगल शासकों से स्वतंत्र कराकर हिन्दू धर्म, सभ्यता एवं संस्कृति की स्थापना करना चाहते थे। शिवाजी ने दक्षिण भारत की तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति से भी लाभ उठाने की योजना बनाई। अहमद नगर, बीजापुर और गोलकुण्डा रियासतों की स्थिति दयनीय हो चली थी। शिवाजी ने इस परिस्थिति का लाभ उठाकर अपनी शक्ति बढ़ानी शुरू कर दी थी। उन्होने बीजापुर राज्य पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिया।

2.3. शिवाजी की आरम्भिक सफलताएँ

अपने मावली योद्धा की सहायता से शिवाजी ने 1648 ई0 में सिंहगढ़ के दुर्ग पर अधिकार कर लिया। इसपर बीजापुर के सुल्तान का अधिकार था। सिंहगढ़ के अतिरिक्त उन्होने चाकन, पुरन्दर, सूपा जावली आदि दुर्गों पर भी अधिकार किया। 1645–47 के बीच उन्होने रायगढ, कोंकण और तोरण पर भी अधिकार कर लिया। इससे शिवाजी की शक्ति और प्रतिष्ठा बढ़ गई। 1656 ई0 में जावली के महत्वपूर्ण दुर्ग पर अधिकार कर लिया। इससे मावल प्रदेश पर उनका अधिकार हो गया और सतारा तथा कोंकण तक का मार्ग विस्तार के लिए खुल गया। रायगढ़ को भी उन्होने जीता एवं वहाँ अपनी शक्ति का केन्द्र स्थापित किया। बीजापुर राज्य अपनी आंतरिक स्थिति एवं मुगलों के आक्रमण के कारण शिवाजी की ओर ध्यान नहीं दे सका। इसका लाभ उठाकर बीजापुरी क्षेत्रों और मुगल इलाकों पर शिवाजी ने धावा मारना जारी रखा। 1657 ई0 में उन्होने जुवार नगर को भी लूटा।

2.4. शिवाजी और मुगल

शिवाजी के स्वतंत्र राज्य की स्थापना में मुगल सबसे बड़े रोड़ा थे। औरंगजेब भी दक्षिण में मराठों के बढ़ते प्रभाव से चिंतित होकर शिवाजी की शक्ति को कुचलना चाहता था। अतः दोनों में संघर्ष आवश्यक था। औरंगजेब ने 1660 ई0 में दक्षिण के सूबेदार शाइस्ता खाँ को शिवाजी का दमन करने का आदेश दिया। वह शिवाजी पर आक्रमण कर पूना पर अधिकार कर लिया। चाकन और कल्यान से भी शिवाजी को हाथ धोना पड़ा। इन पराजयों से शिवाजी की शक्ति कमजोर पड़ी। मराठा सेना का उत्साह बढ़ाने के उद्देश्य से शिवाजी ने एक दुःसाहसिक कदम उठाया। 1663 ई0 में एक रात्रि में उन्होने पूना में शाइस्ता खाँ के शिविर पर आक्रमण कर शाइस्ता खाँ को जख्मी कर दिया एवं उसके एक पुत्र तथा सेनानायक को मार दिया। शाइस्ता खाँ को भागकर अपनी जान की रक्षा करनी पड़ी। इस पराजय से मुगल प्रतिष्ठा को जहाँ ठेस पहुंची वहीं शिवाजी की प्रतिष्ठा पुनः बढ़ गई। शिवाजी ने 1664 ई0 में मुगलों के प्रसिद्ध बन्दरगाह सूरत को भी लूट लिया।

शाइस्ता खाँ की पराजय से क्रुद्ध होकर औरंगजेब ने दक्षिण से हटाकर कर शाइस्ता खाँ को बंगाल भेज दिया तथा शहजादा मुअज्जम और आमेर के राजपूत राजा जयसिंह को शिवाजी के विरूद्ध भेजा। जयसिंह पूरी तैयारी के साथ

दक्कन गया। उसने कूटनीतिक चाल शिवाजी के विरोधी मराठा सरदारों एवं बीजापुर के सुल्तान को अपने पक्ष मे मिला लिया। जयसिंह ने 1665 ई0 में शिवाजी के प्रमुख अड्डे पुरन्दर को, जहाँ वह अपने परिवार और खजाने के साथ रहते थे, घेर लिया, आस–पास के क्षेत्रों को लूट कर जयसिंह ने किले पर दबाव बढ़ा दिया। शिवाजी को कहीं से भी सहायता नहीं मिली। उन्होने जून 1665 में जयसिंह के साथ पुरन्दर की सन्धि कर ली। इस सन्धि के अनुसार, शिवाजी को मुगल अधीनता स्वीकार कर अपने 23 किले तथा निकटवर्ती क्षेत्र, जिनकी वार्षिक आय 4 लाख हूण थी, मुगलों को देना पड़ा। शिवाजी के पास सिर्फ 12 किले बच गये। कोंकण और बालाघाट के क्षेत्र शिवाजी के पास रहने दिये गये लेकिन इनके बदले शिवाजी के पुत्र शम्भाजी को 500 घुड़सवारों के साथ औरंगजेब की सेवा में भेज दिया गया।

पुरन्दर की सन्धि शिवाजी के लिए कष्टदायक थी, यद्यपि परिस्थिति के अनुसार उन्होने इसे स्वीकार कर लिया। जयसिंह के अनुरोध पर वह स्वयं भी औरंगजेब से मिलने आगरा गये। आगरा में शिवाजी का यथोचित स्वागत नहीं हुआ तथा उनके विरोध प्रकट करने पर औरंगजेब ने उन्हे नजरबन्द कर दिया। औरंगजेब के इरादों को भाँपकर शिवाजी पहरेदारों को धोखा देकर अपने पुत्र के साथ आगरा से निकल भागे और सकुशल महाराष्ट्र वापस पहुँच गये। कुछ समय बाद औरंगजेब से समझौता कर लिया। औरंगजेब ने उन्हे बरार की जागीर एवं राजा की उपाधि दी तथा उनके पुत्र को पाँच हजारी मनसब का पद दिया। शिवाजी की औरंगजेब के साथ समझौता एक कूटनीतिक चाल थी। औरंगजेब बीजापुर और गोलकुण्डा को समाप्त करने के लिए समय चाहता था। तो शिवाजी अपनी आंतरिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिए

इसी बीच दक्षिण में मुगलों की दुर्बल स्थिति को देखते हुए शिवाजी ने अपने खोये हुए दुर्गों को पुनः वापस लेने का प्रयास आरम्भ कर दिया। 1670 ई0 से मराठा मुगल सम्बन्ध पुनः कट गये। शहजादा मुअज्जम और दिलेर खाँ के आपसी मन–मुटाव का लाभ उठाकर शिवाजी ने मुगलों से अनेक किले वापस छीन लिए। उन्होने सूरत पर दोबारा आक्रमण कर उसे लूटा और 1672 ई0 मे वहां चौथ वसूला। 1670–74 के बीच उन्होने पुरन्दर, पन्हाला, सतारा एवं अनेक दुर्गों को वापस ले लिया। वह मुगलों एवं बीजापुर की सुल्तान को परेशान करता रहा। इस समय औरंगजेब पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त मे अफगानों से युद्ध करने में व्यस्त था, इसलिए वह शिवाजी के विरूद्ध कोई ठोस कदम नहीं उठा सका।

2.5. छत्रपति के रूप में शिवाजी

1674 ई0 तक शिवाजी की शक्ति और उनका प्रभाव क्षेत्र अत्यधिक विकसित हो चला था। लगभग सम्पूर्ण महाराष्ट्र उनके प्रभाव एवं अधिकार में आ चुका था। 16 जून 1674 को उन्होने रायगढ़ के दुर्ग में अपना विधिवत राज्याभिषेक किया एवं छत्रपति की उपाधि धारण की। इसके साथ ही उनका स्वतंत्र मराठा राज्य स्थापित करने का सपना पूरा हुआ। शिवाजी ने अपने परिश्रम, साहस, वीरता और कूटनीतिज्ञता के बल पर मराठा राज्य की स्थापना की। न तो औरंगजेब और न ही दक्षिण के शिया राज्य शिवाजी के इस कार्य को रोक सके। राज्य की स्थापना के साथ ही शिवाजी की स्थिति में महत्वपूर्ण परिवर्तन आ गया। अब वह मराठों के सर्वशक्तिशाली और सर्वमान्य नेता के रूप में सामने आए। अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए शिवाजी ने प्रमुख मराठा वंशों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए। राज्याभिषेक के अवसर पर उपस्थित ब्राम्हणों ने उन्हे क्षत्रिय घोषित कर

राजपद के लिए वैधानिक अधिकार प्रदान किये। अब वह एक जागीरदार अथवा लुटेरा मात्र नहीं थे, बल्कि माराठा राज्य के संस्थापक बन गये। उनकी स्थिति अब दक्षिण के एक स्वतंत्र और शक्तिशाली शासक की हो गयी।

शिवाजी ने अब पुनः मुगलों एवं बीजापुर से संघर्ष प्रारम्भ कर दिया। उन्होने मुगल सेनापति बहादुर खाँ के शिविर पर आक्रमण कर पेड़गांव में स्थित मुगल खजाने को लूट लिया। इससे उसकी आर्थिक समस्या कुछ दूर हुई। उन्होने खानदेश, बंगलाना कोल्हापुर इत्यादि मुगल अधीनस्थ इलाकों पर भी आक्रमण किये। बीजापुर राज्य के इलाकों पर कभी वे हमला करते तो कभी मुगलों के विरूद्ध उसकी सहायता कर उससे धन वसूलते। शासक के रूप में उनका सबसे कार्य था– कर्नाटक में अपनी शक्ति का विस्तार करना। उसने बीजापुर से जिंजी और वेलोर को छीन लिया। इसके अलावा तुंगभद्रा से कावेरी नदी के बीच का इलाका भी उन्होने जीत लिया। इस प्रकार शिवाजी ने अपने साहस और पराक्रम से एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना कर ली। उनके राज्य के अन्तर्गत सम्पूर्ण महाराष्ट, कोंकण और कर्नाटक का एक बड़ा क्षेत्र सम्मिलित था।

2:6 शिवाजी का प्रशासन

मराठा राज्य के संस्थापक के अतिरिक्त शिवाजी की गणना एक कशल शासक के रूप में भी होती है। नवनिर्मित मराठा राज्य की प्रशासनिक संरचना में भी शिवाजी की सूझ–बूझ और उनकी कुशलता देखी जा सकती है। अनेक विद्वानों ने शिवाजी के प्रशासन की तुलना अफगान शासक शेरशाह और मुगल सम्राट अकबर से की है। शिवाजी का आदर्श **''हिन्दू राजशाही''** या **'हिन्दू पद–पादशाही'** की स्थापना थी। इसलिए, उन्होने प्राचीन भारत प्रचलि प्रशासनिक व्यवस्था के अनेक तत्वों को अपना लिया परन्तु यह पूर्णतः हिन्दू शासन प्रणाली पर ही आश्रृत नहीं था। शिवाजी के प्रशासन पर तत्कालीन दक्षिणी रियासतों एवं मुगल प्रशासन का भी प्रभाव देखा जा सकता है। उन्होने राजतंत्रात्मक व्यवस्था की स्थापना की, परन्तु उनका प्रशासन धार्मिक कट्टरता अथवा निरंकुशता पर आश्रृत नहीं था। जन–कल्याण की भावना एवं धार्मिक सहिष्णुता को उन्होने अपने शासन का आधार बनाया।

2.6.1 केन्द्रीय प्रशासन में राजा की स्थिति

राजतंत्रात्मक व्यवस्था के अनुरूप मराठा राजा (शिवाजी) शासन का प्रधान होता था। राज्य की सारी शक्तियाँ उसी के हाथ में केन्द्रित रहती थीं। सिद्धान्तः वह स्वेच्छारी और निरंकुश शासक होता था। जिसपर किसी भी प्रकार का वैधानिक नियन्त्रण नहीं था। प्रजा को प्रशासन में दखल का अधिकार नहीं था।

2.6.2 अष्ट प्रधान

प्रशासन में सहायता देने के लिए शिवाजी ने आठ मंत्रियों की नियुक्ति की जो अष्ट प्रधान के नाम से जाने जाते हैं। इनका कार्य विभिन्न विभागों की देखभाल करना एवं आवश्क्तानुसार राजा को परामर्श देना था। इन मन्त्रियों की स्थिति मंत्रीपरिषद से भिन्न थी। इनकी नियुक्ति एवं कार्यविधि शिवाजी की इच्छा पर ही निर्भर थी। शिवाजी इनकी सलाह मानने को बाध्य नहीं थे।

अष्ट प्रधान में सबसे महत्वपूर्ण पद पेशवा का था। प्रशासनिक व्यवस्था में राजा के पश्चात उसी का स्थान था। वह अन्य मन्त्रियों एवं पदाधिकारियों के कार्यों

का निरीक्षण भी करता था। उसके पद के महत्व का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि सभी सरकारी दस्तावेजों पर राजा के साथ उसकी भी मुहर लगाई जाती थी। शिवाजी के बाद पेशवा के अधिकार में लगातार वृद्धि होती गई और अन्ततः पेशवा ही प्रशासन का प्रधान बन गया।

सर–ए–नौबत अथवा सेनापति, शिवाजी के अधीन सैन्य व्यवस्था का प्रधान होता था। सेनापति का पद भी राज्य के किसी प्रमुख मराठा सरदार को ही दिया जाता था। सैन्य व्यवस्था का संगठन उसी की जिम्मेदारी थी। सैनिकों की भर्ती उन्हें अस्त्र–शस्त्र और घोड़े उपलब्ध कराना, सैनिकों के प्रशिक्षण, उनपर अनुशासन इत्यादि की जिम्मेदारी उसी की थी।

अमात्य अथवा मजूमदार, राज्य की आय–व्यय का हिसाब रखता था। वह अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित सभी अधिकारियों के कार्यों का निरीक्षण भी करता था। मंत्री अथवा वाकया–नवीस राजा की सुरक्षा एवं व्यक्तिगत कार्यों की जिम्मेदारी के अतिरिक्त गुप्तचर तथा सूचना विभाग के कार्यों को भी देखता था। सचिव अथवा सुरूनवीस अथवा चिटनिस राजकीय पत्र–व्यवहार का कार्य संभालता था। वह सभी सरकारी पत्रों को पूरी जांच–पड़ताल और अपनी मुहर लगाने के बाद ही भेजता था। सुमंत अथवा दबीर की स्थिति विदेश मंत्री के समान थी। दूसरे राज्यों से कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य उसी का था। संधि एवं युद्ध के मामलों में वह राजा सलाह भी दिया करता था।

न्यायाधीश, न्याय–विभाग का प्रधान होता था। उसे सैनिक और नागरिक सभी प्रकार के विवादों को निपटाना पड़ता था। समूचे राज्य में न्याय की उचित व्यवस्था करने का कार्य भी उसी के अधीन था। पण्डित राव नामक मंत्री दान विभाग का प्रधान होता था। वह जनता में नैतिक चरित्र बनाए रखने का प्रयास करता था। राज्य की ओर से ब्राम्हण, विद्वानो, गरीबों एवं असहायों को दी जानेवाली आर्थिक सहायता पर उसका नियन्त्रण रहता था। वह सामाजिक नियमों को भंग करने के लिए दण्ड की भी व्यवस्था करता था। इन मन्त्रियों के अतिरिक्त चिटनिस तथा मुंशी भी शिवाजी के पशासन में सहायता देते थे।

2.7. सैन्य संगठन

मराठा राज्य की स्थापना सैनिक शक्ति के बल पर हुई थी। अतः इसकी सुरक्षा के लिए शिवाजी ने सैन्य संगठन पर विशेष ध्यान दिया। वह सैनिकों की नियुक्ति, उनके प्रशिक्षण एवं अनुशासन पर व्यक्तिगत ध्याय देते थे। शिवाजी की नियमित और व्यक्तिगत सेना की टुकड़ी पागा अथवा बरगीर के नाम से जानी जाती थी। इस टुकड़ी में करीब 45,000 सर्वश्रेष्ट घुड़सवार थे। सेना को विभिन्न टुकड़ियों में विभक्त कर उन्हे क्रमशः पंचहजारी, एकहजारी, जुमलादार और हवलदार के सुपर्द कर दिया गया था। पागा सैनिकों को युद्ध के सामान और वेतन राज्य की ओर से दिये जाते थे। घुड़सवार सेना की दूसरी टुकड़ी सिलहदार कहलाती थी। ये अस्थाई थे तथा इन्हे राज्य से नियमित वेतन नहीं मिलता था। शिवाजी की सेनामें एक पैदल सेना की भी टुकड़ी थी। पैदल सैनिक पाइक के नाम से जाने जाते थे। इसे भी विभिन्न टुकड़ियों में बाँटकर सैनिक अधिकारियों के सुपर्द कर दिया गया था। सेनापति के नीचे क्रमशः सातहजारी, एक हजारी, हवलदार और नायक इस सेना के कार्य देखते थे। शिवाजी की सेना में ऊँट और

हाथी की टुकड़ियाँ तथा तोपखाना भी था। शिवाजी ने एक जल बेड़ा का भी गठन किया था।

2.8. राजस्व व्यवस्था

सेना की ही तरह शिवाजी ने राजस्व व्यवस्था के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य किये। उनके समय में राजा को मुख्यतः लगान, चुँगी, बिक्री कर तथा चौथ एवं सरदेशामुखी करों से आमदनी होती थी। युद्ध के लूट से भी धन मिलता था। चौथ वार्षिक आमदनी का चौथाई भाग था। सरदेशमुखी दसवाँ भाग था। यद्यपि ये कर उचित नहीं ठहराये जा सकते परन्तु इससे मराठा राज्य को बहुत अधिक आमदनी होती थी।

शिवाजी ने भूमि – व्यवस्था में भी महत्वपूर्ण परिवर्तन किया। अपने सुधारों के लिए उन्होने मलिक अम्बर की लगान की व्यवस्था को आधार बनाया। 1679 ई0 में अन्ना जी दत्तो द्वारा पूरी जमीन का सर्वेक्षण करवाया गया और राहत पहुँचाने के लिए अनेक कार्य किये। लगान की वसूली के लिए किसानों से सीधा सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास किया गया। जागीरदारी और जमींदारी प्रथा के स्थान पर रैयतवाड़ी व्यवस्था को प्रोत्साहन दिया गया। लगान वसूली के लिए राजकीय अधिकारी नियुक्त कर दिये गये। लगान की राशि भी निश्चित कर दी गई। कृषि को प्रोत्साहन देने के लिए किसानो को आवश्यक्तानुसार ऋण एवं अन्य आवश्यक सामग्री दी गई। इन सबके चलते राज्य की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ हुई राजकीय आय का एक बड़ा भाग प्रशासन, सेना एवं जनहित के कार्यों में खर्च होता था।

2.9. प्रान्तीय एवं स्थानीय प्रषासन

केन्द्रीय संगठन के अतिरिक्त प्रशासनिक सुविधा के लिए शिवाजी ने प्रांतीय एवं स्थानीय व्यवस्था पर भी ध्यान दिया। सम्पूर्ण मराठा राज्य को विभिन्न प्रांतों में विभक्त किया गया। इन प्रांतों की दो श्रेणियाँ थी – स्वराज्य और मुगलई। स्वराज्य वैसे प्रांत थे जो शिवाजी के प्रत्यक्ष नियन्त्रण में थे। ऐसे प्रांतो को तीन श्रेणियों में बांटा गया था – उत्तरी प्रांत, दक्षिणी प्रांत और दक्षिणी पूर्वी प्रान्त। स्वराज्य के अतिरिक्त नवनिर्मित क्षेत्रों को एक प्रांत के रूप के रूप में अलग से संगठित किया गया था। इस प्रांत मु (मुगलई) मैसूर का उत्तर, मध्यवर्ती और पूर्वी भाग, मद्रास का वेलारी, चितूर और आकार्ट के क्षेत्र रखे गये।

प्रांतो से छोटी प्रशासनिक इकाई परगना थी। एक परगना में अनेक गाँव होते थे। परगना का में अनेक गाँव होते थे। परगना का प्रशासन देशमुख सैनिक अधिकारियों एवं स्थानीय कर्मचारियों के अधीन था। गाँवों की व्यवस्था पटेल और ग्राम पंचायत देखती थी। ग्रामों को प्रशासनिक स्वयत्तता प्रदान की गई थी।

2:10 सारांश

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में जितने भी शासक हुए हैं, उनमें शिवाजी का नाम अग्रणी है। एक राज्य–संस्थापक एवं प्रशासक के रूप में उनकी तुलना किसी भी महान शासक से की जा सकती है। शिवाजी में अनेक व्यक्तिगत गुण थे। वह वीर, साहसी, नीति–निपुण थे। अपने अदम्य साहस और सूझ–बूझ के बल पर एक साधारण जागीरदार से वह मराठा राज्य के संस्थापक बन गये। उनकी

शक्ति एवं पराक्रम के आगे दक्षिण की शिया रियासतों और मुगलों ने भी घुटने टेक दिए। औरंगजेब जैसे शक्तिशाली एंव साघन सम्पन्न सम्राट भी उनके उद्देश्य की पूर्ति में बाधक नहीं बन सका। उनका सबसे महत्वपूर्ण कार्य था मराठों को एक राष्ट्र के रूप में संगठित कर उनमें राष्ट्र प्रेम की भावना जगाना। मराठा इतिहास इसके लिए उनका सदैव ऋणी रहेगा।

2.11. अभ्यासार्थ प्रश्न

मराठा शक्ति के उदय में शिवाजी की भूमिका का वर्णन कीजिये।

- ❖ शिवाजी के प्रारम्भिक जीवन पर प्रकाश डालिये।
- ❖ शिवाजी और मुगलों के साथ संघर्ष की विवेचना कीजिये।
- ❖ शिवाजी के शासन प्रबन्ध पर प्रकाश डालिये।
- ❖ शिवाजी की सैन्य व्यवस्था पर एक लेख लिखिये।
- ❖ शिवाजी की राजस्व व्यवस्था पर एक टिप्पणी लिखिये।
- ❖ छत्रपति के रूप में शिवाजी का मूल्यांकन कीजिये।

2:12 सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. सर, यदुनाथ सरकार – शिवाजी एण्ड हिज टाइम्स
2. देसाई, रंजीत और पाण्डे, विक्रान्त – द ग्रेट मराठा
3. कुलकर्णी, ए0आर0 – द मराठा
4. मेहता, जे0एल0 इतिहास भाग–2 – मध्यकालीन भारत का वृहत
5. वर्मा, हरीश चन्द्र – मध्यकालीन भारत भाग–2

इकाई–3

उत्तरकालीन मुगल शासक एवं नये राज्यों का उदय

इकाई की रूप रेखा

3.0. उद्देश्य

3.1. प्रस्तावना

3.2. उत्तराधिकार का युद्ध

3.3. बहादुर शाह (1707–1712)

3.4. जहाँदार शाह (1712–1713)

3.5. फर्रूखशियर (1713–1719)

3.6. रफी–उद–दरजात और रफी–उद–रौला (1719)

3.7. मोहम्मद शाह 'रंगीला' (1719–1748)

3.8. अहमदशाह (1748–1754)

3.9. आलमगीर द्वितीय (1754–1759)

3.10. आलमशाह द्वितीय (1759–1806)

3.11. नए राज्यों का उदय

3.12. हैदराबाद

3.13. अवध एवं बंगाल

3.14. राजपूत राज्यों की स्वतंत्रता

3.15. सिख

3.16. जाट

3.17. मराठा

3.18. सारांश

3.0. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप उत्तरकालीन मुगल शासको के क्रिया कलाप के सम्बन्ध में जान सकेंगें। अब मुगल वंशी अपनी वैभव को खोकर पतन की ओर अग्रसर हो गई थी। नई–नई क्षेत्रीय शक्तियां हावी हो रही थी और विदेशी कम्पनियां अपनी स्थिति सुदृढ़ करने में लग गई। इसके अलावा आप निम्न बाते जान सकेंगें:–

- ❖ उत्तरवर्ती मुगल शासकों की अयोग्यता।

- ❖ नये–नये स्वतंत्र राज्यों का उदय।
- ❖ हैदराबाद, अवध एवं बंगाल का एक स्वतंत्र एवं शक्तिशाली राज्य के रूप में उदय।
- ❖ राजपूत राज्यों की स्वतंत्रता का प्रयास करना।
- ❖ सिक्ख एवं जाटों का उदय।

3.1. प्रस्तावना

1707 में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगल इतिहास में नया मोड़ लिया। औरंगजेब के समय तक मुगल साम्राज्य अपने विकास की चरम सीमा तक पहुंच गया था, परन्तु उसकी मृत्यु के साथ ही उसके उत्तराधिकारियों के समय में शक्तिशाली एवं वैभवशाली साम्राज्य का विघटन एवं पतन तेजी से हुआ। उसकी मृत्यु के पचास वर्षों के भीतर ही भारत में अनेक शक्तियां क्षेत्रीय राज्य स्थापित करने में सफल हुयी। भारत पर विदेशी आक्रमण हुये, मुगल सम्राट की शक्ति और प्रतिष्ठा नष्ट हो गयी, मुगल दरबाद गुटबाजी और षड्यंत्रों का अखाड़ा बन गया। इसका लाभ उठाकर अंततः ईस्ट इंडिया कम्पनी भारत में अपना शासन स्थापित करने में सफल हुयी। 1857 ई० के विद्रोह का नेतृत्व करने के अपराध में अन्तिम मुगल बादशाह बहादुर शाह 'जफर' को गद्दी से हटाकर अंग्रेजों ने भारत में मुगलों की सत्ता समाप्त कर दी तथा भारत को ब्रिटिश ताज का एक उपनिवेश बना दिया।

3.2. उत्तराधिकार का युग

औरंगजेब की मृत्यु के साथ ही उत्तराधिकार का युद्ध आरम्भ हो गया। औरंगजेब के पाँच पुत्र थे– सुल्तान मुहम्मद, मुअज्जम, आजम, अकबर और कामबख्श। सुल्तान मुहम्मद की मृत्यु 1676 तथा अकबर की 1704 में हो चुकी थी। औरंगजेब की मृत्यु के समय मुअज्जम काबुल, आजम गुजरात तथा कामबख्श बीजापुर का सूबेदार था। मृत्यु के बाद तीनों शहजादे गद्दी पर अधिकार करने के लिए तैयार हो गये। तीनों ने ही अपने–अपने को सम्राट घोषित कर दिया। जून 1707 में आगरा के निकट मुअज्जम एवं आजम के मध्य युद्ध हुआ। जिसमें आजम पराजित हुआ और मारा गया। अब मुअज्जम, कामबख्श की ओर बढ़ा और उसे भी पराजित कर दिया। अब मुअज्जम की स्थिति निरापद हो गयी। वह बहादुरशाह अथवा शाहआलम प्रथम के नाम से मुगल साम्राज्य का वारिस बना।

3.3. बहादुरशाह (1707–1712)

बहादुरशाह परिपक्व उम्र में गद्दी पर बैठा था। अनेक चारित्रिक गुणों के होते हुए भी वह मुगल साम्राज्य की अखण्डता को बनाये रखने में समर्थ नहीं हो सका। उसके समय से ही मुगल साम्राज्य का विघटन प्रारम्भ हो गया। औरंगजेब के समय से ही मराठे, राजपूत और सिख मुगल विरोधी नीतियां अपनाते रहे थे। औरंगजेब जैसे शक्तिशाली सम्राट की मृत्यु का लाभ उठाकर इन शक्तियों ने पुनः अपना प्रभाव बढ़ाना आरम्भ कर दिया। राजपूत दुर्गादास के नेतृत्व में स्वतंत्रता प्राप्त करने का अभियान चला रहे थे।

बहादुरशाह ने राजपूतों की मैत्री प्राप्त करने के लिए अजीत सिंह का जोधपुर का शासक स्वीकार कर उसे मनसबदार बना लिया। आमेर के शासक जयसिंह द्वितीय और दुर्गादास से भी मंत्री स्थापित की गयी। राजपूतों की मैत्री हासिल कर बहादुरशाह ने सिखों की ओर ध्यान दिया। गुरू गोविन्द सिंह के पश्चात् बंदा बहादुर सिखों का नेता हुआ। उसने मुगलों से संघर्ष जारी रखा। उसने 'सच्चा बादशाह' की उपाधि धारण की तथा पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त में अपनी स्थिति सुदृढ़ कर पंजाब एवं निकटवर्ती क्षेत्रों पर आक्रमण कर दिया। उसने लोहगढ़ को अपनी शक्ति का केन्द्र बनाया। बहादुरशाह ने लोहगढ़ पर अधिकार कर लिया, परन्तु बंदा बहादुर पर नियंत्रण स्थापित नहीं कर सका। सरहिन्द पर भी मुगलों का अधिकार हुआ, परन्तु इससे मुगल–सिख सम्बन्ध सामान्य नही हो सके। बहादुरशाह ने मराठों के साथ भी समझौता करने का प्रयास किया। उसने साहू को राजा स्वीकार कर मराठों के साथ चलते आ रहे लम्बे संघर्ष को समाप्त करने का प्रयास किया, परन्तु मुगल–मराठा सम्बन्ध भी सामान्य नहीं हो सके। बहादुरशाह अपने उदारता के द्वारा प्रजा एवं अपने प्रतिद्वंदी शक्तियों से सामान्य व्यवहार बनाने में सफल हुआ।

3.4. जहाँदार शाह (1712–13)

बहादुरशाह की मृत्यु के पश्चात् पुनः उत्तराधिकार का प्रश्न उठ खड़ा हुआ। बहादुरशाह के चार पुत्र थे– जहाँदारशाह, अजीमुसशान, जहाँशाह तथा रफी उसशान। इन चारों में जहाँदारशाह ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा के सूबेदार के रूप में प्रशासनिक क्षमता ग्रहण कर ली थी। जुल्फीकार खाँ की सहायता से अपने तीनों भाईयों को युद्ध में पराजित कर उनकी हत्याकर, जहाँदारशाह गद्दी पाने में सफल हुआ। वह लाहौर से दिल्ली पहुँचा, जहाँ उसका राज्याभिषेक हुआ। उसने जुल्फीकार खाँ को अपना वजीर नियुक्त किया। गद्दी पर बैठते ही जहाँदारशाह को फरूखशियर (बंगाल का नायब सूबेदार एवं अजीमुसशान का पुत्र) के विद्रोह का सामना करना पड़ा। पटना में 1712 ई० में उसने अपने आपको सम्राट घोषित कर दिया। उसकी सहायता पटना के नायब सूबेदार सैयद हुसैन अली खां और उसका भाई अब्दुल्लाह खां जो इलाहाबाद का नायब सूबेदार था, कर रहे थे। फर्रूखशियर इन सैयद बन्धुओं के साथ दिल्ली की ओर बढ़ा। 1712 के युद्ध में जहाँदारशाह पराजित हुआ और फरवरी 1713 में उसकी हत्या कर दी गई। जहाँदारशाह मात्र 10 महिने तक शासक रहा। उसका सारा समय भोग विलास में व्यतीत होता था।

3:5 फर्रूखशियर (1713–1719)

फर्रूखशियर सैयद बन्धुओं की सहायता से गद्दी पर बैठा था। इसलिए शासक बनते ही उसने उन दोनो को उच्च पद प्रदान किया। सैयद हुसैन अली को वजीर तथा सैयद अब्दुल्लाह को मीरबख्शी पर नियुक्त किया गया। फर्रूखश्यिर एक नितांत ही कमजोर और अविवेकी शासक था। उसके समय में दरबारियों की शक्ति में वृद्धि हुई, परन्तु बादशाह की शक्ति और प्रतिष्ठा में कमी आई। फर्रूखशियर वस्तुतः सैयद बन्धुओं के हाथों खिलौना बन गया। फर्रूखशियर के शासन की प्रमुख घटनाएं थी, मेवाड़ के शासक अजीत सिंह तथा सिख नेता बंदा के विरूद्ध सैनिक अभियान। अजीत सिंह एक स्वतंत्र शासक बनकर मुगल विरोधी कार्य कर रहा था। इसलिए मुगल सेना को उस पर आक्रमण करने का आदेश दिया गया। मुगल सेना के समक्ष अजीत सिंह को आत्म समर्पण करना पड़ा। इसी

प्रकार बंदा के विरूद्ध सैनिक अभियान कर उसके अनुयायियों समेत गिरफ्तार कर लिया गया। जून 1716 में बंदा एवं उसके पुत्र की हत्या कर दी गई। जाट नेता चूड़ामन के विद्रोह को दबा दिया गया। चूड़ामन ने सैय्यद बन्धुओं के साथ समझौता कर मुगल विरोधी कार्यवाही नहीं करने का वचन दिया। एक अन्य उल्लेखनीय घटना है औरंगजेब द्वारा मराठा हिन्दुओं पर लगाया गया जजिया वापस लेना। 1719 ई0 में मराठा शासक साहू से एक संधि कर सैय्यद बन्धु ने मराठा सैनिकों की सहायता से फर्रूखशियर की हत्या कर दी। यह घटना मुगलों के पतन की दर्दनाक स्थिति का धोतक है।

3.6. रफी–उद–दरजात और रफी–उद–दौला

फर्रूखशियर के स्थान पर अब सैयद बन्धुओं ने रफी–उद–दरजात को बादशाह बनाया। वह मात्र चार महीनों तक ही गद्दी पर रहा। वह क्षय रोग का मरीज था। अतः जून 1719 मे उसके स्थान पर रफी–उद–दौला को नया बादशाह बनाया गया। वह शाहजहाँ द्वितीय के नाम से गद्दी पर बैठा। वह भी सैयद बन्धुओं के हाथ का खिलौना बना रहा। सितम्बर 1719 में इसकी भी बिमारी से मृत्यु हो गई।

3.7. मुहम्मद शाह 'रंगीला'

अब सैयद बन्धुओं ने मुहम्मदशाह को गद्दी पर बिठाया। नया बादशाह सैयद बन्धुओं की कड़ी निगरानी में रखा गया। मुहम्मदशाह सैयद बन्धुओं की प्रभाव से मुक्त होना चाहता था। इसके लिए उसने अन्दर ही अन्दर प्रयास आरम्भ कर दिया।

इस समय तक सैयद बन्धुओं के अत्याचारों से दरबार के अनेक सरदार तंग आ चुके थे। इन लोगों ने गुप्त रूप से सम्राट को सहायता का आश्वासन दिया। ऐसे सरदारों में प्रमुख था, मालवा का सूबेदार निजाम–उल–मुल्क। उसने षड़यत्र कर हुसैन अली की हत्या उस समय करवा दी, जब वह बादशाह को अपने साथ लेकर दक्षिण की ओर निजाम–उल–मुल्क के विरूद्ध बढ़ा। अपने भाई की हत्या की सूचना पाकर अब्दुल्लाह ने दिल्ली में शाहजादा इब्राहिम को गद्दी पर बैठा दिया। इस बीच मुहम्मदशाह, अमीन खां के साथ वापस दिल्ली लौटा। उसने बिलोपपुर के निकट अब्दुल्लाह को युद्ध में पराजित कर उसे गिरफ्तार कर लिया। बाद में उसकी हत्या कर दी गई।

मुहम्मद शाह अब सैय्यद बन्धुओं के प्रभाव से मुक्त हो गया। उसने पहल अमीन खां तथा बाद में निजाम–उल–मुल्क को अपना वजीर नियुक्त किया, परन्तु निजाम–उल–मुल्क कुछ समय बाद ही दक्कन वापस चला गया। मुहम्मदशाह के समय में सम्राट की शक्ति एवं प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हुई, परन्तु वह प्रशासन, दरबार अथवा साम्राज्य पर अपना नियन्त्रण स्थापित नहीं कर सका। साम्राज्य के विभिन्न भागों में लगातार विद्रोह हुए, जिन्हे वह दबा नहीं सका। उसके समय में हैदराबाद, अवध, बंगाल स्वतंत्र हो गये एवं मराठों, जाटों, सिखों, रूहेलों ने अपनी शक्ति बढ़ा ली। उसी के समय में नादिरशाह ने भारत पर आक्रमण कर मुगल साम्राज्य की खोखली जड़ों को तीव्र आघात किया। इससे मुगल साम्राज्य के पतन की गति और तीव्र हो गई।

3.8. अहमदशाह

अहमदशाह के समय में मुगल सत्ता और अधिक संकुचित हो गई आंतरिक प्रशासन नष्ट हो गया, राज्य में अशान्ति और अव्यवस्था व्याप्त हो गई। बादशाह का अधिकार दिल्ली के समीप सिमटकर रह गया। अहमदशाह में राज्य की गिरती अवस्था को नियन्त्रण में रखने की न तो क्षमता थी और न ही इच्छा ही। उसका सारा समय भोग–विलास में व्यतीत होता था। इसलिए दरबार में गुटबाजी और दलबंदी बढ़ गई। ईरानी और तुरानी सरदारों के आपसी संघर्ष ने स्थिति और दयनीय कर दी। मराठों ने दिल्ली में अपना प्रभाव बढ़ा लिया। मुगल बादशाह की दयनीय स्थिति को देखते हुए अहमदशाह अब्दाली ने भी भारत पर आक्रमण किया तथा पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत एवं पंजाब में अपना अधिकार बढ़ा लिया।

इन परिस्थितियों में वजीर इमाद–उद–मुल्क ने जून1754 में अहमदशाह को गद्दी से उतार दिया। उसे अंधा बनाकर कारगार में डाल दिया गया।

3.9. आलमगीर द्वितीय

अब अजीजुद्दीन को आलमगीर द्वितीय के नाम से गद्दी पर बिठाया गया। वह भी एक अयोग्य और निकम्मा शासक प्रमाणित हुआ। उसके समय में वास्तविक शक्ति वजीर इमाद–उल–मुल्क के हाथों में सुरक्षित रही, आलमगीर उसके हाथों की कठपुतली बना रहा। वजीर ने अपने हितों की सुरक्षा के लिए बादशाह पर अत्याचार किये, उसे आवश्यक खर्च भी नहीं दिये गये। उसकी स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई। वजीर के अत्याचारों से बचाने के लिए उसने अपने पुत्र अलीगौहर को पूर्वी प्रान्तों में भेज दिया। मराठे इस समय अधिक शक्तिशाली हो गए। उनकी कार्यवाहियों से क्रुद्ध होकर अब्दाली ने 1757 ई0 में दिल्ली पर आक्रमण कर इसे जी भर कर लूटा। आलमगीर उसे धन देकर ही अपनी प्रतिष्ठा एवं प्राणों की रक्षा कर सका। अब्दाली के वापस जाने के बाद वजीर उमाद–उल–मुल्क ने नवम्बर 1759 में आलमगीर की हत्या करवा दी।

3.10. शाहआलम द्वितीय (1759–1806)

आलमगीर की हत्या के पश्चात मुगल सत्ता नाम मात्र की रह गई। वजीर इमाद–उल–मुल्क ने कामबख्श के पौत्र मुही–उल–मिल्कत को शाहजहाँ तृतीय के नाम से गद्दी पर बिठाया, लेकिन दरबारियों ने उसे मान्यता प्रदान नहीं की। इस बीच अलीगौहर ने बिहार में अपने आपको सम्राट घोषित कर अपना राज्याभिषेक करवाया। उसने शाहआलम द्वितीय की उपाधि धारण की। दिल्ली पर मराठों के नियन्त्रण, अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण और वजीर इमाद–उल–मुल्क के भय से सम्राट बनकर भी वह दिल्ली आने को तैयार नहीं हुआ। वह बिहार से शासन करने लगा और दिल्ली का राजसिंहासन खाली रहा। इसपर वजीर का ही अधिकार रहा।

1761 ई0 में घटनाक्रम तेजी से चलने लगा। पानीपत के युद्ध में माराठों की पराजय हुई, शाहआलम भी अंग्रजों से 1764 में पराजित हुआ। बक्सर के युद्ध में पराजित होकर उसे बंगाल, बिहार, और उड़ीसा की दीवानी अंग्रेजों को देनी पड़ी और वह स्वयं भी ईस्ट इण्डिया कम्पनी का पेंशनभोक्ता बना दिया गया। मुगल राजनीति पर अब अंग्रेजी भी हावी होने लगे। यद्यपि 1772 ई0 में वह मराठों

के संरक्षण में दिल्ली आने और गद्दी पर बैठने में सफल हुआ, परन्तु उसकी स्थिति दिनोदिन कमजोर पड़ती गई उसे मीरबख्श गुलाम वजीर ने अंधा कर गिरफ्तार कर लिया और बेदारबख्श को बादशाह बनाया। शाहआलम महादजी सिंधिया की सहायता से पुनः गद्दी प्राप्त करने में सफल हुआ। दोबार शासक बनकर उसने अंग्रेजों की सहायता से मराठों से मुक्ति पाई एवं अंग्रेजों का पेंशनभोक्ता बनकर रहने लगा।1806 ई0 में उसकी मृत्यु हुई।

शाहआलम के साथ ही मुगलों की वास्तविक सत्ता समाप्त हो गई। मुगल बादशाह केवल नाम के बादशाह रह गये, वास्तविक सत्ता अंग्रेजों के हाथ में चली गई। अंग्रेजों ने बादशाह को पेंशन देकर सत्ता पर अधिकार कर लिया। अकबर द्वितीय (1806–1837) एवं बहादुरशाह जफर (1837–1857) नाम मात्र के शासक बने रहे। 1857 ई0 के विद्रोह के पश्चात बहादुरशाह जफर को गद्दी से उतार कर रंगून भेज दिया गया। वहीं 1862 में उसकी मृत्यु हो गई। भारत में मुगल सत्ता का स्थान अब ब्रिट्रिश ताज ने ले लिया। इस प्रकार औरंगजेब की मृत्यु के साथ मुगल साम्राज्य के पतन और विघटन की जो प्रक्रिया आरम्भ हुई उसने अंततः भारत में मुगलों की सत्ता ही समाप्त कर दी।

3.11. नये राज्यों का उदय

औरंगजेब की मृत्यु से उत्पन्न राजनीतिक अव्यवस्था, गद्दी पर अयोग्य एवं कमजोर मुगल बादशाहों के आने, मुगल दरबार की दलबंदी एवं षड़यंत्र का लाभा उठाकर अनेक क्षेत्रीय शक्तियों ने स्वतंत्र राज्यों की स्थापना के लिए प्रयास आरम्भ कर दिए। इस प्रक्रिया में दक्कन, अवध और बंगाल में नवीन मुस्लिम राज्यों की स्थापना हुई। इसके साथ–साथ मराठों, राजपूतों, सिंखो एवं जाटों ने भी अपनी स्वतंत्रता स्थापित कर ली। मुगल बादशाह साम्राज्य के विघटन की इस प्रक्रिया को रोकने में असफल रहे। इसी अवधि में कर्नाटक और बंगाल में अंग्रेजों ने भी अपनी शक्ति की स्थापना कर ली। 1764 ई0 तक मुगल बादशाह को बंगाल, बिहार, और उड़ीसा की दीवानी अंग्रेजों को सौंप देनी पड़ी और वह स्वयं ही कम्पनी का पेंशनभोक्ता बन गया।

3.12. हैदराबाद

दक्कन मे हैदराबाद के स्वतंत्र राज्य का संस्थापक चिनकिलिच खाँ निजाम–उल–मुल्क था। उसके पूर्वज समरकन्द के निवासी थे। 17वीं शताब्दी के मध्य में वे भारत आए। उसके पितामह ख्वाजा आबिद को औरंगजेब की सेवा में स्थान मिला। चिनकिलिच खाँ के पिता गाजीउद्दीन फिरोज जंग को भी औरंगजेब ने अपनी सेवा में ले लिया था। अपने परिश्रम के बल पर वह लगातार उन्नति करता गया। गाजीउद्दीन के पुत्र कमरउद्दीन को उसकी सैनिक सेवाओं के बदले चिनकिलिच खाँ की उपाधि प्रदान की गई। जिस समय औरंगजेब की मृत्यु हुई, चिनकिलिच खाँ बीजापुर का प्रशासक था। उसने उत्तराधिकार के युद्ध में अपने को तटस्थ रखा। शासक बनने के बाद बहादुरशाह ने उसे बीजापुर से अवध भेज दिया। बादशाह फर्रूखशियर ने उसे पुनः 1713 ई0 में दक्कन का प्रशासक नियुक्त किया और उसे निजाम–उल–मुल्क की उपाधि भी प्रदान की। फर्रूखशियर के समय में ही उसे दक्कन से हटाकर मालवा का सूबेदार बनाया गया। मालवा मे रहते हुए उसने अपनी स्थिति सुदृढ़ की। जब मालवा से उसे हटाने की योजना बनाई गई तो निजाम–उल–मुल्क ने सैयद बन्धु, हुसैन अली की हत्या करवा दी।

1722 ई0 में मुगल बादशाह मुहम्मदशाह ने अपना वजीर नियुक्त किया। दरबार में अपने विरोधियों के षड़यत्र और मुहम्मदशाह की निष्क्रियता से क्षुब्ध होकर वह बादशाह की अनुमति के बिना ही दिल्ली छोड़कर 1723 में दक्कन चला गया। हैदराबाद के सूबेदार मुबारिज खाँ को निजाम के विरुद्ध कार्यवाही करने का आदेश दिया गया। निजाम ने उसे बरार खाँ के शखर खेड़ नामक स्थान पर पराजित कर उसकी हत्या कर दी। उसने हैदराबाद और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों पर अपना अधिकार स्थापित कर अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर ली। मुहम्मदशाह ने भी उसे मान्यता प्रदान कर दी। 1725 ई0 में उसे आसफजाह की उपाधि और दक्कन की सूबेदारी दे दी गई, परन्तु इस समय से वह एक स्वतंत्र शासक ही बन बैठा।

3.13. अवध

मुगल साम्राज्य के अवशेषों पर उत्तरी भारत में अवध के स्वतंत्र राज्य की भी स्थापना हुई। इस राज्य का संस्थापक सादत–खाँ–बुरहान–उल–मुल्क था। वह खुरासान से आकर भारत में बस गया था तथा दिल्ली दरबार में ईरानी दल का प्रमुख सरदार बन बैठा। 1719 – 1720 में वह हिन्दाल और बयाना का फौजदार, 1722 में आगरा तथा 1724 में अवध का सूबेदार नियुक्त किया गया। नादिरशाह के आक्रमण के समय उसे दिल्ली बुलाया गया, परन्तु उसने वहीं आत्महत्या कर ली। 1739 में सादर खाँ के बाद सफदरगंज को अवध की सूबेदारी दी गई। 1748 में मुगल बादशाह ने उसे अपना वजीर भी बनाया। इन दोनों सूबेदारों के समय में अवध की स्थिति एक स्वतंत्र राज्य की हो गई। मुगल राजनीति पर इसका गहरा असर पड़ा। अक्षम मुगल बादशाह इसके प्रभाव को नहीं रोक सके। शाहआलम द्वितीय के समय में अवध के नए सूबेदार शुजाउदौला को पुनः वजीर नियुक्त किया गया। उसने शाहआलम के साथ बक्सर का युद्ध लड़ा और पराजित हुआ, परन्तु उसकी स्वतंत्रता पर आँच नहीं आई। अवध मुगल साम्राज्य के नियन्त्रण से व्यवहारिक तौर पर पूर्णतः स्वतंत्र हो गये। 1816 ई0 में गाजीउद्दीन हैदर ने अवध के नवाब की उपाधि धारण की तथा पूर्ण स्वतंत्रता की घोषणा कर दी।

3.13. बंगाल

पूर्वी भारत में मुगल साम्राज्य से स्वतंत्र होने वाला सूबा बंगाल था। औरंगजेब की मृत्यु के समय बंगाल और उड़ीसा का नायब नाजिम और दीवान मुर्शिदकुली खाँ था। बंगाल से सूबेदार शाहजादा अजीमुसशान की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर उसने अपनी शक्ति बढ़ानी प्रारम्भ कर दी। उसने राज्य की अर्थव्यवस्था में सुधार किया, स्थानीय जमींदारों पर नियन्त्रण स्थापित किया तथा अंग्रजों द्वारा 'दस्तक' के रूप में दुरुपयोग को बन्द करने का प्रयास किया। प्रशासनिक सुविधा के लिए उसने बंगाल की राजधानी ढाका के स्थान पर मुर्शिदाबाद स्थापित किया। 1713 ई0 में उसे बंगाल का सूबेदार नियुक्त किया गया तथा 1719 ई0 में उड़ीसा भी उसे सुपुर्द कर दिया गया। 1727 ई0 में मुर्शिदकुली खाँ के स्थान पर शुजीउद्दीन खाँ सूबेदार बना। 1733 में बिहार भी बंगाल सूबे में जोड़ दिया गया तथा अलीवर्दी खाँ को नायब नाजिम के रूप में नियुक्त किया गया। अलीवर्दी खाँ ने बंगाल के नवाब सरफराज खाँ की 1740 ई0 में हत्या कर दी और स्वयं वहां का नवाब बन बैठा। अलीवर्दी खाँ बंगाल पर एक स्वतंत्र शासक की हैसियत से शासन करने लगा। उसने दृढ़ता पूर्वक आंतरिक स्थिति सुव्यवस्थित की। अंग्रेज व्यापारियों की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाया तथा मराठों के प्रति होने वाले आक्रमणों से बचने की लिए उनसे सन्धि कर (1751)

उन्हे 12 लाख रूपये प्रतिवर्ष चौथ देना स्वीकार किया तथा उड़ीसा के राजस्व का एक भाग भी दे दिया। 1756 ई0 में अलीवर्दी खाँ की मृत्यु के पश्चात उसका नाती सिराजदौला बंगाल का नया नवाब बना। 1757 ई0 में प्लासी के युद्ध में उसे परास्त कर अंग्रेजों ने बंगाल में अपनी सत्ता स्थापित कर ली।

3.14. राजपूत राज्यों की स्वतंत्रता

मुगल साम्राज्य की दुर्बलता का लाभ उठाकर राजपूताना मे राजपूतों ने भी अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने का प्रयास किया। ऐसे राज्यों में प्रमुख थे – मेवाड़, मारवाड़ और आमेर। औरंगजेब की नीतियों से ये राज्य मुगलों से क्षुब्ध थे। अतः मौका पाते ही इन राज्यों ने मुगलों से स्वतंत्रता प्राप्त करने का अभियान आरम्भ कर दिया। शासक बनने के बाद बहादुरशाह ने उन्हें अपनी सत्ता स्वीकार करने को बाध्य किया, लेकिन शीघ्र ही तीनों ने मुगलों के विरुद्धएक त्रिगुट तैयार कर लिया। बहादुरशाह ने किसी प्रकार उनके साथ अपना सम्बन्ध बनाए रखा। उसकी मृत्यु के पश्चात जोधपुर के अजीत सिंह ने पुनः विद्रोह किया, लेकिन सैयद हुसैन अली के प्रभाव में आकर उसने संधि कर ली। जोधपुर एवं जयपुर के शासक मुगल राजनीति में प्रभावशाली भूमिका निभाने लगे। अजीत सिंह को आमेर और गुजरात तथा जयसिंह द्वितीय को सूरत और आगरा की सूबेदारी दी गई। राजपूतों ने कभी मराठा के साथ मैत्री की तो कभी युद्ध। पानीपत के तृतीय युद्ध में राजपूतों ने मराठों की सहायता नहीं की। उनकी तटस्थता मराठों के लिए मंहगी पड़ी।

3.15. सिंख

औरंगजेब के समय से ही सिख पंजाब की राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते आ रहे थे। गुरूगोविन्द सिंह की मृत्यु के पश्चात सिखों का नेतृत्व बंदा के हाथों में आया। उसने मुगल फौजदार की हत्याकर सरहिन्द पर अधिकार कर लिया। बहादुर ने उसे पकड़ने का प्रयास किया, किन्तु विफल रहा। फर्रूशियर उसे पकड़कर हत्या करने में सफल रहा। बन्दा बहादुर की हत्या के बाद भी सिखों ने हार नहीं मानी। वे अपने आपको संगठित करते रहे। नादिरशह और अहमदशाह के आक्रमण से उत्पन्न अव्यवस्था का लाभ उठाकर सिखों ने पंजाब में अपनी स्थिति सुदृढ़ कर ली।

3.16. जाट

राजपूत और सिखों की तरह जाटों ने भी अपनी स्वतंत्रता स्थापित की। इन जाटों का प्रमुख नेता चूड़ामन था। औरंगजेब के अन्तिम दिनों में जाटों को संगठित कर उसने दिल्ली और आगरा के निकटवर्ती इलाकों में अव्यवस्था फैलादी। फर्रूखशियर ने उनपर नियन्त्रण स्थापित किया, लेकिन उन्हे हमेशा के लिए नियन्त्रित नहीं कर किया जा सका। चूड़ामन के पुत्र बदनसिंह ने आगरा और मथुरा में स्वतंत्र सत्ता स्थापित कर ली। उसके कार्य को सूरजमल ने आगे बढ़ाया। उसने आगरा, धौलपुर, मैनपुरी, हाथरस, अलीगढ़, इटावा, मेरठ, रोहतक, फर्रूखाबाद, मेवात, रेवाड़ी, गुड़गाँव, और मथुरा में जाट सत्ता स्थापित की। जाटों में मराठों के विरुद्ध भी संघर्ष किया। अब्दाली के आक्रमण के समय जाट भी तटस्थ रहे। मराठों के पतन के बाद उत्तरी भारत में उनकी शक्ति और बढ़ गई।

3.17. मराठा

मराठों का राजनीतिक उत्कर्ष औरंगजेब के शासनकाल में हुआ। शिवाजी ने स्वतंत्र मराठा राज्य की स्थापना की। उनकी मृत्यु के पश्चात क्रमशः शंभाजी, राजाराम, ताराबाई एवं छत्रपति साहू ने मुगलों से संघर्ष कर दक्कन, मध्य भारत और उत्तरी भारत में अपनी सत्ता का विस्तार किया। पेशवा बालाजी विश्वनाथ, बाजीराव प्रथम एवं बाला जी बाजीराव ने मराठा शक्ति के विकास को चरम सीमा पर पहुँचा दिया। मुगल बादशाह उनकी शक्ति को रोकने में विफल रहे। पानीपत के तृतीय युद्ध (1761) में मराठों की पराजय से उनकी शक्ति को अस्थाई आघात पहुँचा। पेशवा माधवराव ने पुनः मराठों की शक्ति को संगठित किया।

3.18. सारांश

इस प्रकार, औरंगजेब की मृत्यु के साथ ही मुगल साम्राज्य का विघटन प्रारम्भ हो गया। नई शक्तियों का राजनीति में उदय हुआ। अब मुगल बादशाह नाम मात्र के बादशाह थे। मुगल दरबार षड़यंत्र एवं कुचक्रों का अड्डा बन गया था। बादशाह मुगल सरदारों के हाथ का कठपुतली बन कर रह गये थे। मुगल बादशाहों की दिलचस्पी सुरा–सुन्दरी और भोर – विलास में अधिक होने लगी। शाहआलम द्वितीय के बाद तो मुगल बादशाह अंग्रेजों के पेंशनभोक्ता बन कर रह गये। इसका पूरा लाभ अंग्रेजों ने उठाया और 1858 ई0 में ईस्ट इंडिया कम्पनी ने मुगलों की सत्ता सदा के लिए समाप्त कर दी।

3.19. अभ्यासार्थ प्रष्न

- ❖ मुगल साम्राज्य के पतन के उत्तरदायी कारणों की चर्चा कीजिए।
- ❖ औरंगजेब को उत्तराधिकारियों ने किस प्रकार मुगल साम्राज्य की वैभव एवं शक्ति को नष्ट किया, संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
- ❖ बहादुरशाह के साथ राजपूत एवं मराठों के सम्बन्ध की विवेचना कीजिए।
- ❖ सैयद बन्धुओं को 'किंग मेकर (राजा बनाने वाला)' क्यों कहा जाता है।
- ❖ हैदराबाद एवं अवध के स्वतंत्र राज्य बनने की घटना का वर्णन कीजिए।
- ❖ बंगाल किस प्रकार एक स्वतंत्र राज्य के रूप में अस्तित्व में आया।
- ❖ सिख एवं जाटों ने किस प्रकार मुगलों को परेशान किया एवं अपनी शक्ति को संगठित किया।

3.20. सन्दर्भ ग्रन्थ

प्रो० बी० एल0 ग्रोवर – आधुनिक भारत का इतिहास (1707 से आजतक)

प्रो० आर0 एल0 शुक्ला – आधुनिक काल का इतिहास

प्रो० बी0 बी0 सिन्हा – आधुनिक भारत का इतिहास

प्रो० एल०पी०शर्मा – भारत का इतिहास (1526 – 1967 तक)

प्रो० सतीश चन्द – आधुनिक भारत का इतिहास

प्रो0 कामेश्वर प्रसाद – भारत का इतिहास 1526–1757 तक

इकाई–4

नादिरशाह एवं अहमदशाह अब्दाली की आक्रमण

इकाई की रूप रेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 नादिरशाह के आक्रमण के कारण

4.3 आक्रमण का स्वरूप

4.4 दिल्ली लूट

4.5 नादिरशाह के आक्रमण का प्रभाव

4.6 अमहमदशाह अब्दाली का आक्रमण

4.7 सारांश

4.8 अभ्यार्थ प्रश्न

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप नादिरशाह एवं अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण सम्बन्धी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे। विशेष कर मुगल शासकों की अयोग्यता एवं खोखलापन जग जाहिर हो जाना।

- ❖ नादिरशाह के आक्रमण के कारण एवं स्वरूप।
- ❖ नादिरशाह के आक्रमण के प्रभाव।
- ❖ मुगल साम्राज्य का डूबता सितारा और खोखलापन उजागर।
- ❖ अहमदशाह अब्दाली का भारत पर आक्रमण एवं मराठों का पराजय।
- ❖ मराठा शक्ति को एक बड़ा झटका।
- ❖ इन विदेशी शक्तियों ने अप्रत्यक्ष रूप से यूरोपीय कम्पनियों की भारत में शक्ति बढ़ाने हेतु रास्ता प्रशस्त कर दिया।

4.1 प्रस्तावना

मुगल साम्राज्य की अवनति एवं पतन की स्थिति को देखकर विदेशियों ने भी भारत पर आक्रमण करना प्रारम्भ कर दिये। मुगलों ने पश्चिमोत्तर सीमा की सुरक्षा–व्यवस्था की ओर पर्याप्त ध्यान नही दिया था। इसका लाभ उठाकर अफगानों ने भारत पर आक्रमण आरम्भ कर दिया। यद्यपि इन आक्रमणकारियों का उद्देश्य भारत से धन लूटना ही था, यहां पर राज्य स्थापित करना नहीं परन्तु

उनको आक्रमण का तत्कालीन भारतीय राजनीति और मुगल इतिहास पर गहरा प्रभाव पड़ा। इन आक्रमणों ने पतोनमुख मुगल साम्राज्य को धराशाही कर दिया।

4.2 नादिरशाह के आक्रमण के कारण

पतोनमुख मुगल साम्राज्य पर पहला आक्रमण नादिरशाह ने किया। नादिरशाह एक लुटेरा था। उसने अपनी शक्ति के बल पर फारस के शाह तहमास्य की मृत्यु के पश्चात् राज्य पर अपना अधिकार जमा लिया। 1736 ई0 में वह स्वयं फारस का शासक बन बैठा। उसने अफगानों के विरूद्ध संघर्ष आरम्भ किया। इस प्रक्रिया में उसे काबुल के मुगल प्रान्तपीति से भी संघर्ष करना पड़ा उसने कन्धार पर भी विजय प्राप्त कर ली। अब उसने अपना ध्यान भारत की ओर दिया। नादिरशाह द्वारा भारत पर आक्रमण करने के कारण थे। वह एक महत्वकांक्षी शासक था और अपनी सत्ता का विस्तार करना चाहता था। इस समय भारत की राजनीतिक स्थिति अत्यन्त डवाडोल थी। पंजाब, राजपूताना अशांत था, मराठे अपनी शक्ति का विस्तार कर रहे थे मुगल साम्राज्य छिन्न–भिन्न हो रहा था। साम्राज्य के विभिन्न भागों में क्षेत्रीय स्वतंत्रता के लिए संघर्ष चल रहा था। साम्राज्य का प्रशासन नष्ट प्रायः हो चला था। चारों ओर अशांति एवं अव्यवस्था का वातावरण था।

मुगल दरबार षड्यंत्रों एवं गुटबाजी कर अखाड़ा बन गया था। ईरानी एवं तुरानी दलों के आपसी संघर्ष ने स्थिति और अधिक नाजुक बना रखी थी। दुर्भाग्यवश मुगल बादशाह मुहम्मदशाह इस स्थिति पर नियंत्रण पाने में सर्वथा असमर्थ था। नादिरशाह ने इस स्थिति से लाभ उठाने की योजना बनाई। नादिरशाह भारत की धन का चर्चा सुन चुका था। उसे यहाँ से अपार धन मिलने की आशा थी। अतः धन प्राप्त करने के उद्देश्य से उसने आक्रमण करने की योजना बनाई। उसकी योजना को सीमान्त प्रदेशों की असुरक्षा से भी बल मिला। नादिरशाह के आक्रमण का तत्कालिक कारण था मुगलों द्वारा फारस के साथ राजनीतिक सम्बंन्धों का विच्छेद कर लेना। मुगलों एवं ईसाइयों के बीच लम्बे समय से राजनीतिक संबंध बने हुए थे। दोनो राजदूतो का आदान–प्रदान करते थे लेकिन नादिरशाह के द्वारा सत्ता हथिया लिए जाने के बाद मुगलों ने यह प्रथा बन्द कर दी। नादिरशाह इससे क्रुद्ध हुआ। नादिरशाह ने मुहम्मदशाह के पास अपना दूत भेजकर उसे अफगानो की सहायता नहीं करने का निवेदन किया, परन्तु मुहम्मदशाह ने इस पर ध्यान नही दिया। इस पर क्षुब्ध होकर नादिरशाह भारत पर आक्रमण करने का निश्चय किया।

4.3 आक्रमण का स्वरूप

नादिरशाह ने 1738 ई0 में अपना भारत अभियान प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम उसने काबुल पर अधिकार कर लिया। काबुल से उसने पुनः अपना दूत दिल्ली भेजा, परन्तु मार्ग में ही उसकी हत्या कर दी गई। इससे क्रुद्ध होकर वह तेजी से आगे बढ़ा। जलालाबाद पर अधिकार करता हुआ, निर्दोष व्यक्तियों की हत्या करता हुआ वह लाहौर पहुँच गया। पंजाब के सूबेदार जकारिया खां ने अपने आपको निःसहाय पाकर आत्मसमर्पण कर दिया। उसे दिल्ली दरबार से कोई सहायता नही मिल सकी। नादिर ने पूरे पंजाब पर अधिकार कर लिया। और दिल्ली दरबार का ध्यान नादिरशाह की ओर आकृष्ट हुआ। मुहम्मद शाह की सेनाओं की मुठभेड़ हुई। मुहम्मदशाह युध्द में पराजित हुआ। वह संधि करने के लिए नादिरशाह

के पास गया। नादिर ने उसे अपने अधिकार में ले लिया और धन वसूलने के उद्देश्य से उसे लेकर दिल्ली पहुँचा।

4.4 दिल्ली लूट

मुगल बादशाह, मुहम्मदशाह ने दिल्ली में नादिर का भव्य स्वागत किया। उसे लालकिला के दीवान–ए–खास में ठहराया गया। बादशाह स्वंय ही उसकी खिदमत मे लगा रहा। इसी बीच शहर में स्वयं दुघर्टना घटी। नादिर के दिल्ली आने के पूर्व ही शहर में अशांति, अफवाह एवं घबराहट फैल गई थी। यह भी अफवाह फैल गई कि नादिरशाह की मृत्यु हो गई हैं।

फलस्वरूप ईरानी सैनिको एवं नागरिकों में झड़प हो गई, जिसमें कुछ ईरानी सैनिक मारे गये। इस घटना से नादिर क्रुद्ध हो उठा। 11 मार्च 1739 को सैनिकों को 'कत्ल–ए–आम' का हुक्म दे दिया, ईरानी सैनिक नागरिकों पर टूट पड़े। हजारों निर्दोष व्यक्ति नियमतापूर्वक कत्ल कर दिये गये। शहर में लूट–घसोट का बाजार गर्म हो गया। चाँदनी चौक और निकटवर्ती स्थान जलकर राख के ढेर में बदल गये। कत्ल दृए– आम सुबह आठ बजे से अपराहन तीन बजे तक चला। नादिर ने दुकानों एवं अनाज के गोदामों पर पहरा बैठा दिया तथा निकटवर्ती गाँव को लूटने का आदेश दिया। अतः जो जिंदा बचे भी थे उनकी स्थिति भी भोजन के अभाव में दयनीय हो गई। उस समय की भयावह स्थित का वर्णन एक तत्कालीन इतिहासकार ने बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है। " इरानी सिपाहियों ने नागरिकों पर अमानुषिक अत्याचार कर उन्हें लूटा। एक अनुमान के अनुसार हत्या और लूट–पाट की अवधि के दौरान नागरिकों से करीब 3 करोड़ रुपये वसूले गये। नगर वासियों की स्थिति देखकर मुहम्मदशाह ने नादिर से खून–खराबा रोकने की बिनती की उसके अनुरोध पर नादिर ने हत्या एवं लूट–पाट बन्द करवा दी। नादिरशाह अगले एक महिने तक दिल्ली में ही रूका रहा। इसबीच दिल्ली का शासक वही रहा। उसके नाम का खुतबा भी पढ़ा गया। 5 मई 1739 वह दिल्ली छोड़कर अफगानिस्तान के लिए रवाना हो गया। जाने से पूर्व उसने दिल्ली का ताज पुनः मुहम्मदशाह को सौप दिया। उसकी इस उदारता के बदले मुहम्मदशाह ने नादिर को सिन्ध नदी के पश्चिम का इलाका–कश्मीर से सिंध तक तथा थट्टा और इसका निकटवर्ती बन्दरगाह सौंप दिया।

4.5 नादिर के आक्रमण के प्रभाव

नादिरशाह ने आक्रमणों ने पतोनमुख मुगल साम्राज्य की जड़ों पर गहरा आघात किया। मुहम्मदशाह की पराजय के साथ ही विदेशियों ने भी मुगलों की शान्ति और प्रतिष्ठा नष्ट हो गई। मुगल साम्राज्य पर नादिर के आक्रमण का प्रतिकूल राजनीतिक, आर्थिक, प्रशासनिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ा। पश्चिमोत्तर प्रांत में मुगलों की स्थिति और भी दुर्बल हो गई। ट्रांस–सिन्धु क्षेत्र पर अफगानिस्तान का अधिकार हो गया। लाहौर पर भी नादिर का प्रभाव स्थापित हो गया। वहां के सुबेदार ने नादिर को प्रतिवर्ष 20 लाख रुपये देने का चयन दिया। नादिरशाह के आक्रमण ने साम्राज्य की अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव डाला। नादिरशाह मुगल बादशाह और दिल्ली की जनता को लूट–घसोट कर ही वापस लौटा। वह अपने साथ कोहिनूर, मयूर सिंहासन, लगभग 15 करोड़ रुपये नगद, बहूमूल्य हीरे–जवहारात, वस्त्र–आभूषण, हाथी, घोड़े, ऊँट और अन्य सामान

अपने साथ ले गये। नादिर के आघात को दिल्ली लम्बे–अरसे तक नहीं भूल सकी। शहर में राख और मुर्दों का ढेर लग गया। सड़ते मुर्दों के ढेर एवं उनसे उठनेवाले दुर्गन्ध ने बचे–खुचे लोगों का नगर में रहना दूभर कर दिया. अनेक लोग नगर छोड़कर भाग खड़े हुए। व्यापार और उद्योग नष्ट हो गया। प्रशासनिक व्यवस्ता नष्ट हो गई। जनता की नजर में मुगलिया सल्तनत की प्रतिष्ठा नष्ट हो गई। अब उन्हें अपनी सुरक्षा की भी गारंटी नही रही। नादिर के आक्रमण से प्रेरणा लेकर कुछ ही वर्षो बाद भारत पर अफगानों का दूसरा आक्रमण हुआ। इस प्रकार, नादिर के आक्रमण ने साम्राज्य के पतन की प्रक्रिया को और अधिक तीव्र कर दिया।

4.6 अहमदशाह अब्दाली का आक्रमण

नादिरशाह के आक्रमण के कुछ वर्षों बाद ही अफगानों ने पुनः भारत पर आक्रमण किया। इस बार आक्रमणकारी अहमदशाह अब्दाली था। उसने अफगानिस्तान में अपनी शक्ति सुदृढ़ की एवं मुगल साम्राज्य की कमजोरी तथा पश्चिमोत्तर सीमा की असुरक्षा का लाभ उठाकर भारत पर अनेक आक्रमण किये। उसका उद्देश्य भारत में साम्राज्य की स्थापना करना नही था, बल्कि मुगल बादशाह को आतंकित कर उसे अपने प्रभाव में रखना और भारत से धन लूटना था। 1748–60 के बीच अहमदशाह अहमदशाह ने भारत पर पाँच बार आक्रमण किया। पाँचवा आक्रमण के दौरान उसे मराठों के साथ पानीपथ का तृतीय युद्ध लड़ना पड़ा जिसका दुष्प्रभाव मराठों के साथ–साथ मुगल साम्राज्य पर भी पड़ा। अहमदशाह के आक्रमण ने मुगल–राज्य और इसके बादशाह की स्थिति और अधिक दयनीय बना दिया। दिल्ली में इतनी अधिक अव्यवस्था फैली कि शाहआलम द्वितीय 1772 ई0 में ही दिल्ली वापस आ सका। मुगल साम्राज्य नष्टप्राय हो गया। शाहआलम अंग्रेजों का पेंशन भोक्ता बन गया तथा दिल्ली पर वजीर का ही शासन रहा 1760 ई0 के बाद भी अहमदशाह ने भारत पर दो बार और आक्रमण किया इस समय तक मुगल नाम मात्र के ही बादशाह रह गये थे।

4.7 सारांश

पानीपत के तृतीय युद्ध 1761 के बाद भी अहमदशाह अब्दाली केन्द्रीय शक्ति के कमजोरी के कारण आक्रमण करते रहे। 1764 एक आक्रमण हुआ जबकि दूसरा 1767 में हुआ। दोनो ही बार पंजाब में सिखों की बढ़ती शक्ति को नियंत्रित करने के लिए उसे लाहौर तक आना पड़ा। इस समय तक मुगल शासकों की शक्ति एवं प्रतिष्ठा नष्ट हो चुकी थी। अब वे नाम मात्र के शासक थे और वजीर एवं क्षेत्रीय शक्तियों के आगे घुटने टेक दिये। विदेशी आक्रमणों ने मुगलों के खोखलापन को उजागर कर दिया और क्षेत्रीय शक्ति को शक्तिशाली होने का मार्ग प्रशस्त कर दिया। इन विदेशी आक्रमणों से अपार धन–जन की हानि हुई। असंख्य लोग मारे गये और बचे लोगों पर अत्याचार हुआ। भारत का धन बड़ी मात्रा में विदेश चला गया और भारत को कंगाल बना डाला। ये विदेशी आक्रमण जहाँ मुगल साम्राज्य के लिए ताबूत की आखरी कील साबित हुई वहीं भारतीयों के लिए लाचारी और गरीबी।

4.8 अभ्यास प्रश्न

- ❖ नादिरशाह के आक्रमण के कारणों की समीक्षा कीजिये।
- ❖ नादिरशाह के आक्रमण का स्वरूप की व्याख्या कीजिये।
- ❖ नादिरशाह के आक्रमण का भारत पर किया प्रभाव पड़ा? वर्णन कीजिये।
- ❖ अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण पर एक निबन्ध लिखिये।
- ❖ "नादिरशाह का आक्रमण मुगल साम्राज्य के लिए घातक सिद्ध हुआ" क्या आप इस कथन से सहमत है।
- ❖ अहमदशाह अब्दाली का आक्रमण मराठा शक्ति पर एक बड़ा प्रहार था। इसकी व्याख्या कीजिये।

4.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

प्रो0 बी0 एल0 ग्रोवर – आधुनिक भारत का इतिहास(1707 से आजतक)

प्रो0 आर0 एल0 शुक्ला – आधुनिक भारत का इतिहास

प्रो0 बी0 बी0 सिन्हा – आधुनिक भारत का इतिहास

प्रो0 दीनानाथ वर्मा – आधुनिक भारत का इतिहास(1707–1950)

प्रो0 कामेश्वर प्रसाद – भारत की इतिहास(1526–1757)

इकाई–5 मुगल साम्राज्य का पतन

इकाई की रूपरेखा

5.0. उद्देश्य

5.1. प्रस्तावना

5.2. पतन के राजनीतिक कारणः उत्तराधिकार के नियम का अभाव

5.3. औरंगजेब के दुर्बल उत्तराधिकारी

5.4. प्रान्तीय सूबेदारों की महत्वकांक्षा

5.5. दरबारी भ्रष्टाचार का षड़यंत्र

5.6. प्रशासनिक भ्रष्टाचार

5.7. मुगलों की विदेशी उत्पत्ति

5.8. विदेशी आक्रमण

5.9. भारत में यूरोपीय शक्तियों का विकास

5.10. मुगलों की सैन्य दुर्बलताएँ

5.11. धार्मिक कारण

5.12. आर्थिक कारण

5.13. सारांश

5.14. सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप मुगल साम्राज्य के पतन के विभिन्न कारणों को जान सकेंगें। औरंगजेब के मृत्यु के बाद मुगल पतन की ओर तेजी से अग्रसर हो गये। उनके पतन पीछे राजा के आयोग्यता के अलावा भी निम्नलिखित कारण जिम्मेदारी थीय–

- ❖ उत्तराधिकार नियम का अभाव और तलवार के आधार पर इसका निर्णय।
- ❖ औरंगजेब के दुर्बल, विलासी एवं अदूरदर्शी उत्तराधिकारी।
- ❖ मुगल सुबेदारों की बढ़ती हुई महत्वकाक्षाएँ और आपसी प्रतिस्पर्द्धा।
- ❖ दरबार गुटबाजी एवं षड़यंत्र का बोलबाला।
- ❖ प्रशासनिक भष्ट्राचार।
- ❖ विदेशी आक्रमण।

- ❖ भारत में विदेशी यूरोपीय शक्तियों का विकास।
- ❖ मुगल सैनिक की सैन्य दुर्बलताएँ।
- ❖ मुगलों का धार्मिक कारण।
- ❖ मुगलों की आर्थिक नीति एवं आर्थिक संकट।

5.1. प्रस्तावना

जिस आश्चर्यजनक ढंग से भारत में मुगल सत्ता की स्थापना हुई एवं इसका विकास हुआ, उसी तरह से इसका पतन भी। बाबर ने मुगल सत्ता की स्थापना की, अकबर ने इसका विस्तार कर इस स्थायित्व प्रदान किया, जहाँगीर और शांहजहाँ भारत में मुगलों की सत्ता बनाएं रखे तथा औरंगजेब के समय में दक्षिण में इसका चरम विकास हुआ परन्तु औरंगजेब के उत्तराधिकारी ने इस विशाल और वैभवशाली साम्राज्य को खो दिया। सामान्यतः यह माना जाता है कि मुगल सत्ता के पतन के लिए औरंगजेब ही मुख्य रूप से उत्तरदायी था, लेकिन वास्तविकता ऐसी नहीं थी। यह सच है कि औरंगजेब की दोषपूर्ण नीतियों से साम्राज्य की अखण्डता को क्षति पहुँची, लेकिन औरंगजेब की मृत्यु के बाद भी पतोनमुख अवस्था में मुगल सत्ता बनी रही। इसका विनाश औरंगजेब के उत्तराधिकारी के समय में ही हुआ। मुगल साम्राज्य के पतन के लिए किसी एक शासक को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। इसके पतन के लिए अनेक कारण उत्तरदायी थे जो निम्नलिखित हैं।

5.2. राजनीतिक कारण

उत्तराधिकार के नियम का अभावः–मुगलों ने भारत में जिस राज्य की स्थापना की उसकी बुनियाद शक्ति पर आधारित थी। बाबर के बाद जितने भी शासक हुए उनमें से अधिकांश ने शक्ति के बलपर गद्दी प्राप्त करने का प्रयास किया एवं शक्ति के बल पर ही सफलता प्राप्त की। फलतः मुगलों में उत्तराधिकार का कोई नियम नही रहा। बाबर की मृत्यु के बाद हुमायूँ और उसके भाइयों, अकबर के विरूद्ध जहाँगीर, जहाँगीर के विरूद्ध शाहजहाँ, शाहजहाँ के विरूद्ध औरंगजेब, औरंगजेब कें विरूद्ध शाहजहाँ अकबर तथा औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्रों में उत्तराधिकार के लिए संघर्ष हुआ। यह प्रक्रिया आगे भी चलती रही। वस्तुतः, मुगलों में बादशाह के जीवन काल में ही अथवा उसकी मृत्यु के पश्चात गद्दी के महत्वकांक्षी दावेदारों में संघर्ष आरम्भ हो जाता था। इससे गृह–युद्ध की स्थिति उत्पन्न हो जाती थी। इस संघर्ष में मुगल अमीर, सुबेदार, दरबारी, जागीरदार, मनसबदार महल की स्त्रियाँ तक भाग लेती थीं। इससे दरबार में गुटबाजी और षड़यंत्रों का बोलबाला हो जाता था। इन संघर्षों में धीरे–धीरे मुगलों की प्रतिष्ठ, शक्ति, धन एवं जन की अपार क्षति हुई। इस परिस्थिति ने विघटनात्मक तत्वों को मजबूत कर साम्राज्य को पतन के कगार पर पहुँचा दिया।

5.3. औरंगजेब के दुर्बल उत्तराधिकारी

औरंगजेब के पश्चात मुगल साम्राज्य के पतन का एक प्रमुख कारण था गद्दी पर बहादुरशाह 'जफर' तक जितने भी शासक हुए उनमें चारित्रिक राजनीतिक, सैनिक अथवा प्रशासनिक क्षमता नही थी। उनका अधिकांश समय भोग–विलास में

व्यतीत होता था। उसमें दृढ़ इच्छाशक्ति का सर्वथा अभाव था। परिणामस्वरूप, एक तरफ तो राज्य में क्षेत्रीय तत्व सक्रिय एवं शक्तिशाली हो गए।, प्रशासनिक व्यवस्था ढीली पड़ गई, वजीर और अन्य महत्वपूर्ण पदाधिकारी ने सारी इच्छाशक्ति अपने हाथों में केन्द्रित कर ली तो दूसरी तरफ दरबार में स्वार्थी और महत्वकांक्षी सरदारों का प्रभाव बढ़ गया। इन लोगों ने बादशाह को अपने हाथों की कठपुतली बना लिया। मगुल बादशाहों का अपने हाथों की कठपुतली बना लिया। मुगल बादशाहों को उनके हाथों अपमानित होना पड़ा। "सैयद बन्धु" ही कुछ समय के लिए 'राजा–निर्माता' बन गये। उनके पतन के पश्चात भी अनेक वजीरी पदाधिकारी और सरदारों ने मनमानी की। स्थिति यहां तक बिगड़ गई कि जहाँदारशाह की हत्या कर दी गई, अहमदशाह को उसके वजीर इमाद–उल–मुलक ने गद्दी हटा दिया, आलमगीर की हत्या कर दी तथा शाहआलम द्वितीय अपने वजीर के भय से 1772 ईव के पूर्व दिल्ली आने की हिम्मत नही जुटा सका। इन दुर्बल शासकों ने बादशाह की शक्ति एवं प्रतिष्ठा नष्ट कर पतन का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

5.4. प्रांतीय सुबेदारों की महत्वकांक्षा

मुगल बादशाह की दुर्बलता का लाभ उठाकर प्रान्तीय सुबेदारों ने भी अपना प्रभाव बढ़ाना आरम्भ कर दिया। केन्द्रीय शक्ति के कमजोड़ पड़जाने से वे आनियंत्रित हो उठे। अपने–अपने सुबों में उनलोगों ने अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने का प्रयास आरम्भ कर दिया। फलस्वरूप, साम्राज्य के अनेक सूबे मुगलों के हाथ से निकल गये। बादशाहों में इतनी शक्ति नही थी कि वे अपने सुबेदरों पर नियंत्रण रख सके। फलस्वरूप, मुहम्मदशाह के समय से साम्राज्य के विघटन की प्रक्रिया भी आरम्भ हो गई हैदराबाद, अवध, बंगाल, गुजरात, बुंदेलखण्ड, पंजाब, राजपूताना में मुगलों की शक्ति समाप्त हो गई। दक्षिण से मराठों ने उन्हें पहले ही उखाड़ फेंका था। इस प्रकार, मुगल सत्ता दिल्ली के इर्द–गिर्द ही सिमट कर रह गई।

5.5. दरबारी षड्यंत्र

औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात मुगल दरबार षड्यंत्रों एवं गुटबाजी का अखाड़ा बन गया। सरदारों का चारित्रिक पतन हो गया एवं उनमें स्वार्थ परता की भावना अधिक बलवती हो उठी। वे साम्राज्य का हित नही देखतें थे, बल्कि अपनी शक्ति और सम्पदा बढ़ाने में ही लगे रहे। मुगल बादशाहों की कमजोरी का लाभ इन लोगों ने उठाया। अब दरबारी ही बादशाह के भाग्य का निर्णय करने लगे। औरंगजेब के बाद मुगल दरबार के सरदार स्पष्टः दो गुटों में विभक्त हो गये–हिन्दुस्तानी और मुगल। मुगल दल भी दो वर्गों में विभक्त था–तुरानी और ईरानी। इन दलों के धार्मिक विभेद, आपसी वमनस्थ्य ने बादशाहों के इस प्रकार उलप्राय रखा कि वे प्रशासन अथवा अन्य सदस्याओं की ओर ध्यान नही दे सके बादशाह और दरबार की दुर्बलता का लाभ उठाकर जागीरदार–मनसबदार भी अपनी शक्ति बढ़ाने लगे। इन पर नियंत्रण रखने वाला कोई नही था. इस प्रकार, जहाँ औरंगजेब के पूर्व दरबारियों और सरदारों जैसे महावत खां, अर्ब्दुरहीम खान खाना, बीरबल, सादुल्ला कां, मीर जुमला इत्यादि ने साम्राज्य के हितों की सुरक्षा की थी वहीं बाद के सरदारों ने अपने स्वार्थ में अंधा होकर बादशाह और साम्राज्य दोनों की क्षति पहुंचायी।

5.6. प्रशासनिक भ्रष्टाचार

साम्राज्य के पतन में प्रशासनिक भ्रस्टाचार ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। आरम्भ में मुगल प्रशासन में नियुक्तियां योग्यता के आधार पर होती थी, परन्तु बाद में महत्वपूर्ण पद बादशाह की व्यक्तिगत इच्छा और सरदारों के दबाव में आकर दिए जाने लगे। परिणामस्वरूप, अनुभवी और योग्य अधिकारियों का स्थान अक्षम एवं स्वार्थी लोगों ने ले लिया। इसका घातक परिणाम निकला। प्रशासनिक व्यवस्था नष्ट हो गई। भ्रस्टाचार एवं रिश्वतखोरी का बाजार गर्म हो गया। महत्वपूर्ण पद एवं मनसब घन के बदले दिए जाने लगे। मनसबदारों की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई। स्थानीय शासन में इस मनसबदारों एवं जागीदारों का प्रभाव आवश्यकता से अधिक बढ़ गया। इस प्रभाव का दुरूपयोग इन लोगों ने अपने हित में किया। जागीरदारी व्यवस्था के दुष्परिणाम उत्तर दृ मुगलकाल में साम्राज्य के लिए घातक बने। एक तरफ तो प्रशासनिक व्यवस्था लचर रही थी दूसरी ओर बादशाह रंग–रास में व्यवस्थ था। ऐसी स्थिति में विशाल मुगल साम्राज्य पर नियंत्रण रखना टेढ़ी खीर साबित हुई और साम्राज्य शनैः शनैः पतन की ओर अग्रसर हो गई।

5.7. मुगलों की विदेशी उत्पत्ति

अनेक विद्वानों की मान्यता है कि मुगलों की विदेशी उत्पत्ति ने भी साम्राज्य के पतन में योगदान दिया। मुगल मध्य एशिया से आकर भारत में बसे थे। अतः उन लोगों ने मध्य एशियाई आदर्शों एवं नीतियों को सामने रखकर शासन किया। उन्हें प्रसाशन चलाने के लिए ज्यादातर विदेशियों पर ही आश्रित होना पड़ा। प्रशासन में भारतीयों की उपेक्षा की गई तथा भारतीयों को कभी भी अपना नहीं समझा गया। यह मत भांतिपूर्ण है। यह सत्य है कि मुगल बाहर से आये थे, परन्तु वे यही स्थायी तौर पर बस गये। यहां से वापस जाने को कभी नहीं सोची। अकबर की नीतियों ने अधिकांश भारतीय को मुगलों का समर्थक बना दिया परन्तु यह भी सत्य है कि जग मुगल सत्ता कमजोर पड़ने लगी तो क्षेत्रीय स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वालों (मराठे सिख, इत्यादि) ने यह प्रचार करवा आरम्भ किया कि मुगल विदेशी हैं औरौ उनके हाथों से भारत को मुक्त करना उनका उद्देश्य है। इस भावना ने मुगलों की दुर्बलता के कारण कुछ सीमा तक मुगल विरोधी तत्वों को अवश्य ही प्रोत्साहित किया।

5.8. विदेशी आक्रमण

मुगलों की स्थिति को दयनीय बनाने में विदेशी आक्रमणकारियों का भी हाथ है। मुगलों ने पश्चिमोत्तर सीमा की सुरक्षा की समुचित व्यवस्था नही की थी। अतः 18वीं शताब्दी में इस सीमा से भारत पर अफगानों (नादिरशाह और अहमदशाह अब्दाकी) ने आक्रमण किया। भारत की तत्कालीन राजनीति से प्रेरित होकर थे आक्रमण किए गये थी इन आक्रमणकारियों ने साम्राज्य की रही–सही प्रतिष्ठा भी नष्ट कर दी। मुहम्मदशाह को नादिर के हाथों बंदी बनना पड़ा, दिल्ली जलाकर राखकर कर दी गई एवं उसका सारा वैभव नष्ट कर दिया गया। अहमदशाह ने तों अपने आक्रमण के दौरान मुगलों के संरक्षक मराठों को परास्त कर मुगलों को बेसहारा कर दिया। शाहआलम को अंग्रेजों से संधि करनी पड़ी। इस प्रकार, मुगलों की स्वतंत्र सत्ता समाप्त हो गई। वे कम्पनी के पेंशनभोक्ता और नाम मात्र के बादशाह बने रहे।

5.9. भारत में यूरोपीय शक्तियों का विकास

16वीं शताब्दी से भारत में यूरोपीय शक्तियों ने भी अपना प्रभाव बढ़ाना आरम्भ किया। व्यापार के आड़ में वे राजनीतिक गतिविधियों में भी दिलचस्पी लेने लगें। 18वीं शताब्दी तक भारत में पुर्तगाल और अंग्रेज सबसे अधिक शक्तिशाली बन बैठा। पुर्तगालियों को भी अंग्रेजों ने पीछे छोड़ दिया कर्नाटक के युद्धों और प्लासी के युद्ध के पश्चात् अंग्रेज भारत राजनीतिक सत्ता के विकास में लग गए, मुगल इतने अश्रय हो गए थे कि अंग्रेजों पर नियंत्रण नहीं रख सकें, बक्सर के युद्ध में शाहआलम को अंग्रेजों से परास्त होना पड़ा, मुगलों की शक्ति एवं प्रतिष्ठा पूर्णतः नष्ट हो गई, अंग्रेजों ने मुगलों को अपना पेंशन भोक्ता बनाकर समूचे साम्राज्य और प्रशासन पर अधिकार लिया, 1858 ई. में अंग्रेजों ने मुगलों की सत्ता समाप्त कर दी,

5.10. मुगलों की सैन्य दुबर्लताएँ

भारत में मुगल साम्राज्य को स्थापना एवं इसका विकास सैनिक शक्ति आधार पर हुआ था, जब तक मुगलों की सैन्य शक्ति व्यवास्थित रही साम्राज्य का विकास होता रहा, परंतु इसके कमजोर पड़ते ही साम्राज्य के पतन की प्रक्रिया आरंभ हो गई, मुगल प्रशासन का संगठन एवं इसका स्वरूप सैन्य आवश्यकताओं के अनुरूप था, इस व्यवस्था में केन्द्रीय सत्ता का शक्तिशाली होना अति आवश्यक था, एक योग्य प्रशासक ही इस व्यवस्था को कुशलता पूर्वक चला सकता था, इसलिए अनेक त्रुटियों के बावजूद अकबर इस संगठन पर नियंत्रण बनाए रख सका परंतु उसके बाद सैन्य व्यवस्था में दुर्बलता अकबर इस संगठन पर नियंत्रण बनाए रख सका परंतु उसके बाद सैन्य व्यवस्था में दुर्बलता आती गई, मुगल सेना मनसबदारी व्यवस्था पर आधारित थी परंतु कालांतर में यही व्यवस्था मुगल सेना की दुर्बलता का प्रमुख कारण बनी, बादशाहों के दुर्बल होने की स्थिति में मनसबदार भी अपना प्रभाव बढ़ाने लगे, उनकी सेना की स्वामिभक्ति सम्राट के प्रति नहीं रही। मनसबदारों की सेना में हमेशा अच्छे सिपाही ही नियुक्त नहीं किए जाते थे, इसलिए अगर मनसबदारों की सेना बादशाह का साथ देती थी तो वह बहुत कारगर नहीं होती, मुगलों की सेना विभिन्न जातियों, प्रातों एवं राष्ट्रों के सिपाही थी, इसलिए वे एक जुट होकर संकट की स्थिति में काम नहीं कर पाते थे, उनमें राष्ट्रीयता की भावना का सर्वथा आभाव था, आरंभ में मुगलों की सैन्य शक्ति के आधास्तंभ राजपूत थे, परंतु धीरे–धीरे उन्हें सेना से अलग कर मुगलों ने अपने पाँवों पर स्वयं कुल्हाड़ी मारी, मुगल सेना में अनुशासनहीनता एवं विलासिता भी प्रविष्ट कर गई, सेनापतियों का आपसी विद्वेष, गलत रणनीतियों, नौसेना के अभाव, पुराने अस्त्र–शस्त्रों की प्रधानता, सिर्फ मैंदानी युद्धों में ही पांरगत होना, धापामार युद्ध से अनभिज्ञ होना इत्यादि ऐसे कारण थे, जिन्होंने मुगल सेना की क्षमता नष्ट कर दी और उसे बार–बार पराजय का मुख देखना पड़ा। अनावश्यक लगाता, युद्धों एवं उत्तराधिकार के संघर्षों में भी मुगल सेना का क्षय हुआ।

5.11. धार्मिक कारण

यद्दपि मुगल सम्राटों में भारत में सामान्यतः धर्म निरपेक्षता की नीति अपनायी, परंतु अकबर के बाद मुगल सम्राटों की धार्मिक नीति धीरे–धीरे संकीर्ण होती गई, अनेक विद्वानों की मान्यता है कि, जहाँगीर, शाहजहाँ तथा औरंगजेब ने जो धार्मिक संकीर्णता की नीति अपनायी वह राजनीति से प्रेरित थी, धर्म से नहीं,

परंतु इस वास्तविकता से इंकार नहीं किया जा सकता कि शाहजहाँ और औरंगजेब की संकीर्ण नीतियों ने जाने–अनजाने में बहुसंख्यक हिंदुओं को मुगलों का विरोधी बना दिया, उन्हें यह आभास होने लगा कि, मुगल उनके साथ धार्मिक भेद–भाव कर रहे हैं और उनपर अत्याचार कर रहे हैं, इस भावना को स्वार्थगत राजनीति ने और अधिक आने बढ़ाया। फलतः मुगल सामान्य जनता की सहानभूति खोने लगे, इसका लाभ उठाकर राजपूतों, मराठों, जाटों सतनामियों, सिखों ने विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया, औरंगजेब भी इन पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित कहीं कर सका, मुगल विरोधी अभिमान औरंगजेब के बाद भी चलते रहे, धर्म की राजनीति होने लगी, मुगलों को इन्हें दबाना कठिन हो गया, इन विद्रोहों ने साम्राज्य की जड़ों को खोखला कर उसके विनास का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

5.12. आर्थिक कारण

उत्तर मुगलकाल में आर्थिक दुर्बलता भी मुगलों के पतन का एक कारण बनी। मुगलों ने राज्य की आर्थिक व्यवस्था सुदृढ़ करने के लिए समुचित उपाय नही किये। आरम्भिक शासकों ने कृषि के विकास की ओर अवश्य ध्यान दिया परन्तु उस अनुपात में व्यापार–वाणिज्य की उन्नति की ओर ध्यान नही दिया गया। कृषि का विकास भी आवश्यकतानुसार नही हो सका। एक ओर उत्पादन धीरे–धीरे घटा, परन्तु खर्च और मांगे बढ़ती गई। इसका आर्थिक विकास पर बुरा असर पड़ा। मुगलों की आमदनी का मुख्य स्रोत भूमि लगान एवं विभिन्न सूबों में होने वाली आमदनी थी, परन्तु केन्द्रीय सत्ता के कमजोर पड़जाने से न तो लगान ही ढंग से वसूले जा सके और न ही, प्रांतीय सूबेदारों से निर्धारित कर। जैसे–जैसे सूबे स्वतंत्र होनवे लगे राजकीय आय भी घटती गई। इसे पूरा करने के लिए किसानों पर दबाव बढ़ाया गया लेकिन आर्थिक शोषण से पीड़ित किसानों ने यदा–कदा विद्रोह कर मुगल–विरोधी तत्वों को सहायता पहुँचाई। इसने क्षेत्रीय स्वतंत्रता की भावना को बलवति कर साम्राज्य को दुर्बल कर दिया। मुगल काल में हुई अनावस्यक युद्धों और कला कौशल के विकास पर आवश्यकता से अधिक धन खर्च किया गया। इससे राज्य की आर्थिक स्थिति दुर्बल हो गई। नादिरशाह न तो मुगलों को कंगाल ही बना दिया। आलमगीर द्वितीय को तो, भूखों मरने की नौबत आ गई। ऐसी दुर्बल आर्थिक व्यवस्था में किसी भी राज्य का टिके रहना असम्भव है। यही बात मुगलों के साथ भी हुई।

5.13. सारांश

इस प्रकार मुगल साम्राज्य के पतन के उपरोक्त सभी कारण जिम्मेदार थे। परन्तु जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण था, वह था औरंगजेब के उत्तराधिकारियों की अयोग्यता। राजा के अयोग्यता के कारण ही साम्राज्य की जड़े हिल गई और पतन की ओर तेजी से अग्रसर हो गई। दरबार की गुटबाजी और सरदारों की महत्वकांक्षाएँ साम्राज्य के लिए घातक साबित हुई। प्रान्तपति और सरदार राजा निर्माता (King Maker) की भूमिका निभाने लगे और राजा उनके हाथों का कटपुतली मात्र बन कर रह गये। मुगलों की आर्थिक एवं धार्मिक नीति भी पतन के लिए काफी हद तक जिम्मेदार थी। इन कारणों के अतिरिक्त मुगल साम्राज्य की विशालता, संचार एवं परिवहन के साधनों की अपर्याप्ता, दोषपूर्ण सामाजिक संरचना एवं व्यवस्थाय शान्ति और सुरक्षा के अभाव, बैद्धिक ह्रास तथा औरंगजेब की दोषपूर्ण नीतियां भी मुगल साम्राज्य के विघटन और पतन के लिए जिम्मेदार थी।

5.14. सन्दर्भ ग्रन्थ

प्रो0 बी0 एल0 ग्रोवर	–	आधुनिक भारत का इतिहास (1707–आजतक)
प्रो0 आर0 एल0 शुक्ल	–	आधुनिक भारत का इतिहास
प्रो0 बी0 बी0 सिन्हा	–	आधुनिक भारत
प्रो0 एल0 पी0 शर्मा	–	भारत का इतिहास (1526–1967)
प्रो0 कामेश्र प्रसाद	–	भारत का इतिहास (1526–1757)

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

MAHY-114 ýHkkx&2ü

भारत का राजनैतिक इतिहास :
घटनायें एवं प्रक्रियाएँ

(1206 ई0–1947ई0)

खण्ड – 2

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का प्रादुर्भाव एवं विस्तार

इकाई – 1 **45–50**

भारत में यूरोपीय षक्तियों का उदय

इकाई – 2 **51–56**

पेषवा एवं तत्कालीन राजनीतिक घटनाक्रम – 1

इकाई – 3 **57–62**

पेषवा एवं तत्कालीन राजनीतिक घटनाक्रम – 2

इकाई – 4 **63–68**

जाट बुंदेला एवं अन्य

इकाई – 5 **69–72**

भारत में औपनिवेषिक षक्तियों का पारस्परिक संघर्ष आंग्ल फ्रांसीसी संघर्ष के विषेष सन्दर्भ में।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश प्रयागराज

परामर्श समिति — **MAHY-114**

प्रो0 सीमा सिंह — कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डा0 पी0पी0 दूबे — कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — आचार्य इतिहास एवं प्रभारी निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ सेराज मोहम्मद — आचार्य, इतिहास, श्री देवसुमन उत्तरखण्ड विश्वविद्यालय, गढ़वाल, उत्तराखण्ड

सम्पादक

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई 1–5)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2021

ISBN : 978-93-94487-88-8

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

इकाई–1

भारत में यूरोपीय शक्तियों का उदय

इकाई की रूपरेखा

1.0 **प्रस्तावना**

1.1 **उद्देश्य**

1.2 **यूरोपीय शक्तियाँ (भारत में)**

1.2.1 पुर्तगाली

1.2.2 डच

1.2.3 अंग्रेज

1.2.4 फ्रांसीसी

1.3 **सारांश**

1.4 **शब्दावली**

1.5 **स्वमूल्यांकन प्रश्न**

1.6 **सन्दर्भ/उपयोगी पुस्तकें**

1.7 **अभ्यास कार्य प्रश्न**

1.0. प्रस्तावना

इस इकाई में भारत में यूरोपीय कम्पनियों के उदय को समझ सकेंगें। प्राचीनकाल से यूरोप के साथ भारत के सम्बन्ध थे। धर्म युद्व के काल में यूरोप में पूर्वी गरम मसालों की मांग बहुत बढ़ जाती है। भारत में यूरोपीय शक्तियों का आगमन व्यापारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होता है। कुस्तुनतुनिया पर तुर्क का अधिकार होने के कारण पूर्वी व पश्चिमी देशों के सम्पर्क मार्ग तुर्कों के अधीन आ गये। स्पेन एवं पुर्तगाल इटली के साथ व्यापारिक सम्बंध समाप्त हो जाता है। इसलिए स्पेनवासी एवं पुर्तगाली भारत तथा पूर्वी द्वीप समूह तक पहुँचने के लिए नए एवं सुरक्षित मार्ग ढूँढने लगे। इससे भौगोलिक खोजों के युग की शुरूआत हुई। 1494 में भारत तक पहुँचने का मार्ग खोजते हुए, कोलम्बस अमेरिका पहुँच जाता है। 1498 में वास्कोडिगामा ने भारत पहुँचने का नया समुद्री मार्ग ढूँढ निकाला।

1.1. उद्देश्य

इस इकाई अध्ययन के पश्चात् आप सकेंगे कि :

- ❖ यूरोपीय शक्तियों का भारत के साथ व्यापार का महत्व
- ❖ यूरोपीय देश भारत तथा पूर्वी द्वीप समूह तक पहुँचने के लिए नये मार्ग की खोज

- ❖ भौगोलिक खोजों के युग का सूत्रपात
- ❖ प्रमुख यूरोपीय शक्तियाँ जो भारत आती है
- ❖ यूरोपीय शक्तियों के मध्य परस्पर संघर्ष

1.2 यूरोपीय शक्तियों का भारत में विस्तार

1498 ई० में वास्कोडीगामा के कालीकट आगमन के पश्चात् हिन्द महासागर पर पुर्तगालियों का नियंत्रण बढ़ता गया। सरकारी संरक्षण, मजबूत नौसेना और कूटनीति के द्वारा पुर्तगालियों ने समुद्री व्यापार पर एकाधिकार स्थापित कर लिया। तटीय क्षेत्रों में सामरिक महत्व के स्थलों पर अपने दुर्ग बना लिए, जो उनकी राजनैतिक गतिविधियों के भी केन्द्र थे। पुर्तगालियों का यह प्रभाव डचों अंग्रजों के आगमन तक बना रहा।

1.2.1 पुर्तगाली

यूरोप के साथ भारत के व्यापारिक सम्बंध प्राचीन काल से ही थे। यूरोपीय नगरों में रेशम, जवाहरात, सुगन्धियों, जड़ी–बूटियों आदि वस्तुओं की माँग थी। यूरोप में मसालों की माँग निरन्तर रहती थी, क्योंकि लम्बे शीतकाल में खाद्यान के अभाव में बड़ी संख्या में पशुओं का मांस नमक लगाकर सुरक्षित कर लेते थे, जिसे स्वादिष्ट बनाने के लिए मसालों की आवष्यकता पड़ती थी।

पुर्तगाल के शासक डॉन हेनरीक, जिसे हेनरी द नेवीगेटर भी कहते हैं, ने, भारत के लिए सीधे समुद्री मार्ग की खोज प्रारम्भ कर दी। एक तो वह वेनिस और जिनोवा के व्यापारियों को समुद्र व्यापार से बाहर करना चाहता था, दूसरा ऐशिया और अफ्रीका के लागों को ईसाई बनाकर अरबों की शक्ति को संतुलित करना चाहता था। इसका समर्थन पोप ने भी किया और एक आदेश पत्र जारी किया, जिसके अनुसार केपनोर और भारत के बीच खोजी गयी भूमि सदा के लिए पुर्तगालियों को प्रदान कर दी गयी।

वास्कोडीगामा जब 1498 ई० में कालीकट तो वहाँ के शासक जमोरिन ने पुर्तगालियों का स्वागत किया। उन्हें काली मिर्च, जड़ी–बूटियाँ ले जाने की आज्ञा प्रदान की। वास्को डी गामा द्वारा लाया गया माल, उसके सारे अभियान व्यय से साठ गुना मूल्य पर बिका।

16वीं सदी में पुर्तगालियों का मूल उद्देश्य यूरोप के मसाला व्यापार पर एकाधिकार (monopoly) स्थापित करना और एशियाई व्यापार पर नियंत्रण स्थापित कर वसूलना था। इसके लिए पुर्तगाली आरम्भ से ही बल प्रयोग करने लगे। 1503 ई० में पुर्तगालियों ने कोचीन में छोटा सा दुर्ग बना लिया। दूसरा किला कन्नूर में बनाया। 1505 ई० में फ्रांसिस्को डी अलमीडा का प्रथम पुर्तगाली वायसराय बना कर भारत में भेजा, ताकि वह पुर्तगाली राज्य की स्थापना कर सके। भारत में पुर्तगाली साम्राज्य की नींव उसका परवर्ती वायसराय अलफांजो डी अलबुकर्क रख सका।

अलबुकर्क ने भारत में अनेक बन्दरगाह नगरों पर नियंत्रण स्थापित कर लिया। 1510 में गोवा, अगले वर्ष दक्षिण पूर्व एशिया के मलक्का पर नियंत्रण स्थापित कर लिया। 1515 तक हारमुज पर पुर्तगालियों का अधिकार हो गया।

धीरे–धीरे श्री लंका के अधिकांश तटीय क्षेत्र पुर्तगालियों के नियंत्रण में आ गये। 1530 में गोआ भारत में पुर्तगाली राज्य की राजधानी बन गई।

नौसैनिक श्रेष्ठता के कारण पुर्तगाली हिन्द महासागर में अजेय बन गये। उन्होंने अन्य देशों के साथ व्यापार पर कड़े प्रतिबंध लगा रखे थे। पुर्तगालियों द्वारा जारी अनेक आज्ञाप्तियों (decrees) में कहा गया कि मसालों के व्यापार पर पुर्तगाली सम्राट एवं उसके अभिकर्ताओं का एकाधिकार है। इसका नीति का कोई उल्लघंन नहीं कर सकता था। पुर्तगालियों ने हिन्द महासागर से होने वाले व्यापार पर नियंत्रण स्थापित करने व कर वसूलने के लिए कार्टेज–आर्मेडा–काफिला व्यवस्था लागू की। जिसका एशियाई व्यापार पर गहरा प्रभाव पड़ा। अब कोई भी भारतीय अरबी जहाज बिना कार्टेज (परमिट) के नहीं जा सकता था। भारतीय और अरबी जहाजों को काली मिर्च, गोला बारूद ले जाने की अनुमति नहीं थी। संदेह होने पर पुर्तगाली जहाजों की तलाशी ले सकते थे।

एशिया के शासक कार्टेज व्यवस्था स्वीकार करने लिए बाध्य थे क्योंकि पुर्तगालियों की नौसेना श्रेष्ठ थी। कार्टेज लेने से पहले जहाजों की सुरक्षा की जिम्मेदारी पुर्तगालियों की होती थी। व्यापारी जहाजों की सुरक्षा के लिये पुर्तगाली बेड़ा साथ चलता था। जिससे यह भी सुनिश्चित हो जाता कि कोई जहाज पुर्तगाली व्यवस्था से बाहर जा कर व्यापार न करे। सोलहवी शताब्दी में उत्तर भारत में मुगल एक शक्ति के रूप में स्थापित होते हैं, किन्तु मुगलो से पुर्तगालियों को समुद्री व्यापार को कोई खतरा नहीं था। क्योंकि मुगलों ने ना तो नौसेना बनाने पर बल दिया और न ही समुद्री व्यापार में उनकी विशेष रूचि थी। मुगल बादशाह अकबर पुर्तगालियों से प्रतिवर्ष एक निःशुल्क "कार्टज" प्राप्त कर संतुष्ट हो गया। अकबर और पुर्तगालियों के सौहार्दपूर्ण संबंध बने रहे। उसके समय में तीन जेसुइट मिशन मुगल दरबार में आये।

16वी शताब्दी के अंत एवं 17वी 'शताब्दी के प्रारम्भ में अनेक कारणों से पुर्तगालियों का हिन्द महासागर के व्यापार पर नियंत्रण कमजोर होने लगा। पुर्तगालियों की एकाधिकार नीति के विरूद्ध जमोरिन और पुर्तगालियों के मध्य संघर्ष चलता रहा। स्थानीय व्यापारी भी पुर्तगालियों के प्रतिबंधों का उल्लघन करते थे। काली मिर्च की तस्करी होती थी, जिसमें पुर्तगाली भ्रष्ट अधिकारी सहयोग करते थे। डच एवं अंग्रेजों के हिन्द महासागर में आ जाने से पुर्तगालियों का एकाधिकार समाप्त हो गया। डचों ने दक्षिण पूर्व एषिया से पुर्तगालियों को बाहर कर दिया तथा 1641 में पुर्तगालियों से महत्वपूर्ण मलक्का दुर्ग जीत लिया। श्रीलंका तथा पुर्तगालियों के सभी मालाबारी दुर्ग डचों के अधीन आ गये। डचों की भाँति अंग्रज भी मसाला व्यापार में रूचि रखते थे किन्तु मसालों द्वीपों पर डचों के जमे होने के कारण अंग्रेजों ने भारत पर ध्यान केन्द्रित किया। 1612 में पुर्तगालियों को पराजित कर सूरत में कारखाना स्थापित किया। 1628 में अंग्रेजों ने हारमुज को अपने अधीन कर लिया। इस प्रकार 17वी सदी के पूवार्द्ध में पुर्तगालियों का एकाधिकार सदा के लिये समाप्त हो गया।

1.2.2 डच

डच और ईंग्लिश ईस्ट इंडिया कम्पनी 16वी शताब्दी की पुर्तगाली व्यापारिक संस्थाओं से भिन्न प्रकृति की थी। भारत में पुर्तगाली साम्राज्य की सम्पूर्ण प्रशासनिक एवं व्यापारिक व्यवस्था शाही सरकार (बतवूद) के अधीन थी, जबकि डच एवं इंग्लिश कम्पनियाँ पूर्ण रूप से व्यापारिक संघ थी, इनका संचालन कम्पनी के सदस्य करते थे।

1602 में डच कम्पनी (अवब) की स्थापना हुई, जिसने पुर्तगालियों की व्यापारिक सर्वोच्चता को तोड़ दिया और न केवल एशियाई व्यापार पर एकाधिकार स्थापित किया, बल्कि व्यापारिक मार्ग पर भी अपनी सर्वोच्चता स्थापित कर ली।

व्यापार के प्रारम्भिक चरण में डच तथा इंग्लिश कम्पनियाँ काली मिर्च एवं अन्य मसालों के व्यापार में रूचि रखती थी। मसाले मुख्यतः इंडोनेशिया में मिलते थे, इसलिए डच कम्पनी का यह प्रमुख केन्द्र बन गया। श्रीलंका एवं मालाबार तट पर प्रभाव जमाने के लिए डच व्यापारियों को कुछ वर्ष इन्तज़ार करना पड़ा। 1641 में मलक्का डच के अधीन आ गया। 1658 में श्रीलंका से डच ने पुर्तगालियों को बाहर कर दिया और मालाबार पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। इन व्यापारियों ने तंजौर, जिंजी तथा मदुरई के शासकों से विशिष्ट व्यापारिक सुविधाएँ प्राप्त कर ली। 1632 में हुगली क्षेत्र से पुर्तगालियों को बाहर कर दिया गया तथा इंग्लिश कम्पनी ने अपना व्यापार बंगाल में फैलाना शुरू कर किया। यह क्षेत्र व्यापारिक माल का केन्द्र माना जाता था। ओम प्रकाष मुगल शासक भी अपने साम्राज्य में यूरोपीय कम्पनियों के व्यापार को प्रोत्साहन तथा विशेष सुविधाएँ प्रदान करते रहे।

1.2.3 अंग्रेज

भारत से व्यापारिक सम्बंध स्थापित करने वाली कम्पनियों में सबसे ज़्यादा समय तक भारत के इतिहास को प्रभावित करने वाली अंग्रेज ईस्ट इंडिया कम्पनी थी। जहाँगीर के दरबार में विलयम हॉकिन्स तथा 1615 में सर टामस रो उपस्थित हुए। सर टोमस रो ने मुगल साम्राज्य में व्यापारिक कोठियाँ स्थापित करने की अनुमति प्राप्त कर ली। अंग्रेजों ने 1612 कारखाना सूरत में स्थापित किया। किन्तु यह सफल नहीं रहा। अंग्रेजों ने मछलीपट्टनम में कारखाना स्थापित किया।

अंग्रेजों ने प्रभाव क्षेत्र का विस्तार करते हुए 1633 ई० में बालासोर, 1651 में हुगली, पटना, कासिम बजार आदि स्थानों पर कारखाने स्थापित किये। ये सभी कारखाने सेंट फोर्ट सेंट जॉर्ज के अधीन कर दिये गये। अंग्रेज बंगाल में रेशम, सूती कपड़े, शोरा, चीने के व्यापार में रूचि लेने लगे। किन्तु कम्पनी को जारी रखने में कुछ कठिनाईयो का सामना करना पड़ रहा था। प्रथम वित्तीय कठिनाईयाँ, जिनका समाधान चार्ल्स II एवं जेम्स II के राजकाल में स्थाई सम्मिलित कोष की स्थापना ले हो गया। द्वितीय बंगाल की आंतरिक चुंगी व्यवस्था, जिसे कम्पनी अपने लिए नुकसानदेह समझती थी। 1651 ई० में सुल्तान मूसा ने फरमान जारी कर 3000 रूपये वार्षिक कर अदा कर कहीं भी सामान ले जा सकते थे। 1656 में एक और फरमान अंग्रेजों के पक्ष जारी किया गया।

लेकिन मूसा के उत्तराधिकारियों ने इन आदेशों को मानने से इनकार कर दिया और डच व्यापारियोंकी भाँति कर अद्य करने के लिए कहा। कम्पनी ने 1662 में शाईस्ता खां से तथा 1680 में औरंगजेब से फरमान प्राप्त कर लिया। किन्तु इन फरमानों के बावजूद कम्पनी की व्यापारिक कठिनाईयाँ कम नहीं हुई। अब अंग्रेजों ने शक्ति प्रयोग का निश्चय किया। इस नीति का पालन करते हुए सर जॉन चाइल्ड ने मुम्बई तथ पश्चिमी तट के मुगल बंदरगाह को घेर लिया। अंग्रेजों ने मुगल शक्ति को समझने में भूल की, परिणामस्वरूप जॉन चाइल्ड को औरंगजेब से माफी माँगनी पड़ी 1.5 लाख रूपया हर्जाना देना पड़ा। संघर्ष की नीति का अनुसरण करते हुए अंग्रेजों ने हुगली, हिजली, बालासोर, चटगाँव में मुगलों से संघर्ष किया और मुँह की खाई।

जमींदार शोभा सिंह के विद्रोह के कारण अंग्रेजों ने कारखाने की किलेबंदी की और 1200 रूपये में सुतनती, कालिकात और गोविन्दपुर की जमींदारी अधिकार प्राप्त कर लिए। कम्पनी ने किलेबन्द बस्ती को फोर्ट विलयम कहा, जिसका पहला प्रेसीडेन्ट चार्ल्स आपर को नियुक्त किया। 1717 में कम्पनी ने अपदस्त से एक फरमान प्राप्त किया। जिसमें तीन हजार वार्षिक कर के बदले बंगाल में अंग्रेज व्यापार कर सकते थे। कम्पनी अतिरिक्त भूमि खरीद सकती थी। कम्पनी को टकसाल के प्रयोग के लिये भी अनुमति मिल गयी।

1717 के फरमान का उपयोग अंग्रेज निजी व्यापार में भी करने लगे। जिससे नवाब को राजस्व की हानि होती थी, तथा स्थानीय व्यापारियों पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ रहा था। अंग्रेज कम्पनी का प्रभाव लगातार बढ़ रहा था। मुगल साम्राज्य कमजोर हो रहा था। बंगाल के नवाब की कमजोरी भी स्पष्ट थी। सिराजउद्दौला जब गद्दी पर बैठा तो बंगाल में राजनैतिक अस्थिरता थी। जिसका फायदा उठाकर कम्पनी ने 1757 में नवाब को फार्रूखसियर कर दिया और कठपुतली नवाब गद्दी पर बैठा दिया। बक्सर की जीत ने कम्पनी को भारत में प्रमुख राजनैतिक शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया।

1.2.4 फ्रांसीसी

फ्रांस पूर्वी देशों के साथ व्यापारिक प्रतिस्पर्द्ध में सबसे पीछे रह गया। हेनरी चतुर्थ, रिष्लू ,कालबर्ट ने पूर्वी व्यापार के महत्व को समझा। कोलबर्ट के प्रयास से 1664 में **"कम्पनी–द–ईंद–ओरिएंतल"** की स्थापना की गयी। यह कम्पनी एक सरकारी संगठन था। कम्पनी के प्रारम्भिक वर्ष चुनौतीपूर्ण रहे। एक तो उन्हें देषी शासकों से रियायते प्राप्त नहीं थी। दूसरा डच एवं अंग्रेजों से भी प्रतिद्वद्विता का षिकार होना पड़ा। 1668 में फ्रांसीसियों ने सूरत में तथा 1669 में मछलीपट्टनम् में कोठी स्थापित की। 1673 में फ्रैंको मार्टिन एवं बेंगलोर द लेस्पिने ने पंडिचेरी मुस्लिम सूबेदार से प्राप्त की। यहाँ पांडिचेरी की नींव पड़ी।

यूरोप में डच एवं फ्रांसीसियों के बीच युद्ध छिड़ गया। जिसका प्रभाव भारत पर भी पड़ा। अंग्रेजों के समर्थन से डचो ने पंडिचेरी पर अधिकार कर लिया। 1693 में संधि के बाद पंडिचेरी फ्रांसीसियों को वापस कर दिया गया। फ्रांसीसियों के बुद्धिमत्तापूर्ण प्रशासन से पंडिचेरी समृद्ध बस्ती के रूप में उभरकर सामने आयी।

फ्रेंच ईस्ट इंडिया कम्पनी का उद्देश्य व्यापारिक था किन्तु डचों एवं अंग्रेजों से सुरक्षा को ध्यान में रखकर, किलेबंदी की तथा सैनिक भर्ती किए। 1742 से राजनैतिक उद्देश्य व्यापारिक लाभ की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण हो गए।

1.3 सारांश

आपने इस इकाई में पढ़ा की भारत में यूरोपीय शक्तियों का आगमन व्यापारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होता है, किन्तु अत्याधिक लाभ प्राप्ति के लिए कम्पनियाँ व्यापारिक एकाधिकार प्राप्त करने की कोशिश करती हैं। परिणामस्वरूप देशी शक्तियों के साथ–साथ कम्पनियों में भी आपस में संघर्ष आरम्भ हो जाता। कम्पनियाँ सुरक्षा के लिए किलेबंदी शुरू करती हैं और भारत की राजनैतिक अस्थिरता का लाभ उठा कर राजनैतिक हस्तक्षेप प्रारम्भ कर देती हैं।

1.4 शब्दावली

कारखाना : व्यापारिक सामान एकत्रित करने का स्थान

जमोरिन : कालीकट के शासक

कार्ट्ज : अरब सागर में व्यापार करने का परमिट

एकाधिकार : किसी वस्तु या स्थान से व्यापार करने का अनन्य अधिकार (उवदवचवसल)

आज्ञाप्तियाँ : आदेश

1.5 स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) वास्कोडिगामा 1498 में भारत आया।

(ii) कालीकट के शासक ने पुर्तगालियों का स्वागत नहीं किया।

(iii) अंग्रेजों ने मछलीपट्टनम् में कारखाना स्थापित किया।

(iv) टामस रो जहाँगीर के दरबार में गया।

(v) पुर्तगालियों ने गोवा पर 1515 में अधिकार स्थापित कर लिया।

(i) (✓) (ii) (×) (iii) (✓) (iv) (✓) (v) (×)

1.6. उपयोगी पुस्तकें

1. के.एल.मेथ्यू Portuguese trade with India in 16th century
2. रामसैम्यूर – हिस्ट्री ऑफ ब्रिट्रिश इण्डिया
3. जी० वी० मालेसन – हिस्ट्री ऑफ द फ्रेंच इन इंडिया।

1.7 अभ्यास कार्य प्रष्न :

1. कारखानों की किलेबंदी की क्या आवश्यकता थी
2. कारखाने से क्या अभिप्रायः है
3. यूरोपीय काली मिर्च के व्यापार में क्यों रूचि रखते थे
4. कार्ट्ज से क्या तात्पर्य है

इकाई–2

पेशवा एवं तत्कालीन राजनैतिक घटनाक्रम–1

इकाई की रूपरेखा

2.0. प्रस्तावना

2.1. उद्देश्य

2.2. पेशवा और राजनैतिक उपलब्धियाँ

2.2.1. बालाजी विश्वनाथ

2.2.2. बाजीराव प्रथम

2.2.3. बालाजी बाजीराव

2.3. सारांश

2.4. शब्दावली

2.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

2.6. उपयोगी पुस्तकें

2.7. अभ्यासकार्य

2.0 प्रस्तावना

इस इकाई में राजनैतिक उपलब्धियों को समझ सकेंगे। शिवाजी ने मराठों को संगठित कर दक्षिण में एक शक्ति के रूप में स्थापित किया, और यह शक्ति पेशवाओं के निर्देशन में चरमोत्कर्श पर पहुँच गयी। औरंगजेब की मृत्यु से उत्पन्न राजनैतिक परिस्थितियों का लाभ उठा कर मराठों ने अपनी शक्ति का विस्तार दक्षिण से उत्तर तक कर लिया। पेशवाओं की शक्ति का उत्थान शाहू जी और ताराबाई के मध्य चल रहे संघर्ष के दौरान हुआ और धीरे–धीरे मराठा शक्ति के केन्द्र बिंदु के रूप में स्थापित हो गये।

2.1 उद्देष्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान सकेंगे कि –

- ❖ मराठा शक्ति के चरमोत्कर्य में पेशवाओं का योगदान
- ❖ मराठा शक्ति का दक्षिण से उत्तर तक का विस्तार
- ❖ मराठों की दिल्ली की राजनीति में रूचि
- ❖ मराठों पर पानीपत की तिसरी लड़ाई के दुशप्रभाव

2.2. पेशवाओं की राजनैतिक उपलब्धियाँ

मुगल सेनाओं ने 1689 में शिवाजी के पुत्र शम्भू जी को हरा कर मार दिया और उनके पुत्र शाहू को बन्दी बना लिया। मराठे हार तो गए लेकिन समाप्त नहीं हुए थे। राजाराम तथा उसके पश्चात् ताराबाई ने मुगलों से संघर्ष जारी रखा। मुगलों की कमजोरी और शाहू के पुत्र महाराष्ट्र लौट आने से मराठों में नई स्फूर्ति दौड़ गयी। 18वीं सदी के प्रारम्भ में मराठों का दक्षिण से उत्तर की ओर विस्तार हुआ। नवीन मराठा साम्राज्यवाद के प्रवर्तक पेशवा थे।

2.2.1 बाला जी विश्वनाथ (1713–20)

बालाजी विश्वनाथ श्रीवर्धन के चितपावन ब्राह्मण थे। उन्हें राजस्व तथा सैन्य विषयों का अच्छा ज्ञान था। 1708 में धन्ना जी जादव की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र चन्द्रसेन जादव के ताराबाई से मिल जाने के कारण बालाजी विश्वनाथ को शाहू की सेवा में आने का अवसर मिला। शाहू ने उसे "सेनाकर्ते" के पद पर नियुक्त किया। शाहू और ताराबाई के मध्य चल रहे गृहयुद्ध के दौरान बालाजी की कूटनीति सैन्य कुशलता से प्रभावित होकर शाहू ने उन्हें, 1713 में पेशवा का पद सौंप दिया।

बालाजी का मुख्य उद्देश्य स्वराज की रक्षा करना, प्रशासनिक संगठन तथा सैन्य शक्ति को सुसंगठित करना था। साथ ही वह मराठा राज्य की सीमाओं का विस्तार भी चाहते थे। इस नवीन आवश्यकता की पूर्ति हेतु मराठा क्षेत्र में सामंतवादी व्यवस्था की स्थापना की। पेशवा इस व्यवस्था के अग्रणी थे।

मुगलों के साथ सम्बंध :– बालाजी की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि, मुगल तथा मराठों के बीच एक स्थायी समझौता था। जिसमें दोनों पक्षों के अधिकारों को स्पष्ट किया गया था। मराठा क्षेत्र में सम्राट ने शाहू के अधिकार को मान्यता प्रदान की।

दिल्ली की राजनीति में हुसैन अली और अबदुल्ला खाँ प्रमुख शक्ति के रूप में उभरे। उन्होंने 1713 मे फार्रूखसियर को गद्दी पर बैठाया। किन्तु सम्राट और सैयद बन्धुओं के बीच मतभेद उत्पन्न हो गये। सम्राट ने हुसैन से मुक्ति पाने के लिए उसे दक्षिण का वायसराय नियुक्त कर दिया। हुसैन अली ने मराठा शक्ति को अपने हित में प्रयोग करना चाहा और उसने मराठों से संधि कर ली, जिसके अनुसार स्वराज क्षेत्र में राजस्व अधिकार को मान्यता दी, दक्कन के 6 मुगल सूबों तथा मैसूर, त्रिचनापल्ली व तंजौर में चौक तथा सरदेशमुखी वसूलने का अधिकार दिया गया। गोंडवाना, बरार, खानदेश, हैदराबाद व कर्नाटक में हाल में मराठों द्वारा विजित क्षेत्रों पर मराठों के अधिकार को मान्यता दी गई। शिवनेर व त्रिम्बक के किले मराठों को वापस कर दिये। शाहू की माता और उसके परिवार को दक्कन लौटने की अनुमति दी। इसके बदले शाहू ने मुगलों की सहायता के लिये 15000 सैनिक रखने तथा मुगल क्षेत्रों को लूटपाट से मुक्त रखने का वचन दिया।

अतः हुसैन अली ने जब दिल्ली की ओर प्रस्थान किया, तब 15000 मराठा सैनिक उसके साथ थे। सैयद बन्धुओं ने फार्रूखसियर को गद्दी से उतार दिया और अगले सम्राट रफी–उद–दरजात ने इस संधि को स्वीकार कर लिया।

दिल्ली का अभियान ने बाला जी को पूर्णरूप से स्थापित कर दिया। 1720 में बाला जी की मृत्यु के पश्चात् उसकी नीति को उसके उत्तराधिकारियों ने आने बढ़ाया।

2.2.2 बाजीराव प्रथम (1720–40)

बालाजी की मृत्यु के पश्चात् शाहू ने, बाजीराव प्रथम को नियुक्त किया। वह नवयुवक था, किन्तु उसकी सूझबूझ अद्‌भुत थी। शाहू उसकी योग्यता से प्रभावित था।

प्रारम्भ से ही बाजीराव के सम्मुख कई समस्याऐं थी। दक्षिण में मुगल सूबेदार समझौते के बावजूद, चौथ और सरदेशमुखी भी वसूली में अड़चन पैदा कर रहे थे। शम्भू जी, शाहू की सर्वोच्चता स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था। मराठा सरदार भी स्वायत्तता प्राप्त करना चाहता था। बाजीराव ने दक्कन की इन समस्याओं का समाधान कर, अपनी सर्वोच्चता पुनः स्थापित कर ली।

निजाम से सम्बंध :– निजामुलमुल्क, 1724 में पुनः दक्कन में सूबेदार बनकर आ गया। वह स्वयं एक स्वायत्त राज्य बनाना चाहता था। अतः उसने कूटनीति का प्रयोग किया। उसवने शम्भू जी को सैनिक सहायता प्रदान की और शाहू को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए लगभग विवश कर दिया, परन्तु पेशवा ने बिगड़े हालात सम्भाल लिए और 7 मार्च 1728 को पालखेड़ा में निजाम को करारी हार दी। उसे मुंशी शिवागांव की संधि मानने पर बाध्य किया। निजाम ने शाहू को चौथ तथा सरदेसमुखी देना, शम्भू जी को सहायता न देना, विजित प्रदेश लौटाना तथा बदी छोड़ना स्वीकार कर लिया। निजाम की इस हार से दक्कन में मराठों की सर्वोच्चता स्थापित हो गयी।

गुजरात तथा मालवा :– गुजरात भारत तथा पश्चिमी एशिया व पूर्वी अफ्रीका के बीच व्यापार का प्रमुख केन्द्र था। मराठों ने हुसैन अली से गुजरात से चौथ वसूलने का अधिकार माँगा था, परन्तु वे असफल रहे। मराठों ने गुजरात पर अनेक अभियान किये और चौथ प्राप्त की। मार्च, 1730 में मुगल सूबेदार सरबुलंद खां ने मराठों के चौथ तथा सरदेषमुखी प्राप्त करने के अधिकार को स्वीकार कर लिया।

मालवा, दक्कन तथा गुजरात को जाने वाले व्यापारिक मार्ग पर स्थित है। बालाजी ने मालवा से चौथ और सरदेशमुखी प्राप्त करने के कूटनीतिक प्रयास किये, परन्तु वे सफल नहीं हो सके। बाजीराव प्रथम ने यह अधिकार बलपूर्वक प्राप्त कर लिए।

बुंदेलखण्ड की विजय :– मालवा के पूर्व में यमुना व नर्मदा के बीच पहाड़ी प्रदेश में बुन्देलों का राज था। उन्होंने अकबर, जहाँगीर औरंगजेब का विरोध किया था। बुन्देला राज्य इलाहाबाद की सूबेदारी में था। मुहम्मद खां बंगश ने इलाहाबाद का सूबेदार बनने के पश्चात् बुन्देलों पर आक्रमण किया और उसमें कुछ सफलता भी मिली। बुन्देला नरेश छत्रसाल ने मराठों से सहायता माँगी। 1728 में बाजीराव ने मुगलों से विजित प्रदेश वापस ले लिए छत्रसाल ने पेशवा का सम्मान किया और काल्वी, सागर, झाँसी, हृदयनगर पेशवा को निजी जागीर के रूप में भेट दी।

दिल्ली पर आक्रमण :– पेशवा ने दिल्ली सम्राट को शक्ति की एक झलक दिखाने के लिए दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। केवल 500 सवारों के साथ जाटों, मेवातियों के प्रदेश को पार करते हुए 1737 में दिल्ली पहुँच गया। बाजीराव दिल्ली में 3 दिन ठहरा परन्तु मुगल सम्राट की शक्तिहीनता स्पष्ट हो गयी।

बाजीराव एक महायोद्धा, राजनीतिज्ञ एवं राज्य निर्माता थे। लोग उन्हें लड़ाकू पेशवा के रूप में स्मरण करते हैं।

2.2.3 बाला जी बाजीराव (1740–61)

1740 में बाजीराव की मृत्यु के पश्चात् शाहू ने बाला जी बाजीराव को पेशवा नियुक्त किया। इस समय तक पेशवा पद पैतृक बन गया था और वास्तविक शक्ति भी पेशवा के धन में आ चुकी थी। 1750 में संगोला संधि ने यह प्रक्रिया पूर्ण कर दी और जतारा का राजा महलों का महापौर बन कर रह गया।

बाला जी बाजीराव ने मराठा शक्ति का उत्तर और दक्षिण में विस्तार किया। गुजरात, मालवा तथा बुन्देलखण्ड सीधे उनके प्रशासन के अधीन आ गये। मराठा सेनायें बंगाल तक पहुँच गयी। मैसूर महाराज से अनेक प्रदेश छीन लिए। दिल्ली के शक्ति संघर्ष में मराठा महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगे।

मुगल सम्राटों की दुर्बलता के कारण दिल्ली दरबार षड़यंत्रों का केन्द्र बन गया। ऐसी स्थिति में मराठों को दिल्ली की राजनीति में हस्तक्षेप करने का अवसर मिला। 1751 में अब्दाली के आक्रमण से भयभीत सफदरजंग ने मराठों से सहायता माँगी। करारनामों के अनुसार 50 लाख वार्षिक के बदले मराठे मुगल साम्राज्य को आन्तरिक एवं बाह्य सुरक्षा प्रदान करेंगे। उन्हें अजमेर के प्रदेश भी मिल गये और पंजाब सिंध तथा दोआब से चौथ प्राप्त करने का अधिकार मिल गया।

जनवरी 1757 में अब्दाली पंजाब आया तथा दिल्ली और मथुरा के बीच के प्रदेश को लूटा। मराठा सेना रघुनाथ राव और मल्हार राव के नेतृत्व में दिल्ली भेजी गयी। जब तक मराठे दिल्ली पहुँचे, अब्दाली काबुल लौट चुका था। रघुनाथ राघव ने सम्राट को पुनः दिल्ली की गद्दी पर बैठा दिया और अब्दाली के एजेंट को पंजाब से निकालकर पंजाब पर अधिकार कर लिया।

यह अब्दाली के लिये महान चुनौती थी। 1759 में अब्दाली दिल्ली की ओर बढ़ा। पूना से मराठा से अफगानों से टक्कर लेने के लिय सदाशिवराव भाऊ के नेतृत्व में भेजी गयी। दोनों सेनाओं के मध्य 1761 में पानीपत में युद्ध हुआ। मराठे हार गये और समस्त भारत पर राज्य करने का उनका सपना चूर हो गया। इसी सदमें में बालाजी बाजीराव का निधन हो गया।

2.3 सारांश

आपने इस इकाई में पढ़ा कि पेशवाओं ने अपनी योग्यता, सैन्य कुशलता एवं दूरदर्शिता से मुगल शक्ति के खंडहर पर मराठा शक्ति की सर्वोच्चता स्थापित कर ली। इस काल में मराठों का विस्तार बंगाल से गुजरात तक तथा दक्षिण से उत्तर में पंजाब तक हुआ।

2.4 शब्दावली

स्वराज क्षेत्र	:	मराठों के नियंत्रणाधीन क्षेत्र
चौथ	:	मुगल तथा सुल्तानों के क्षेत्र से लिया जाने वाला चौथाई कर
सरदेशमुखी	:	मराठा क्षेत्र के सददेशमुखों से लिया जाने वाला कर
मुगलई	:	मुगलों के अधीन क्षेत्रः

2.5 स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) बाला जी विश्वनाथ 1713 में पेशवा बने

(ii) पेशवा बाजीराव प्रथम ने दिल्ली पर आक्रमण किया

(iii) हुसैन अली के साथ मराठा सैनिक दिल्ली आये

(iv) पानीपत का तृतीय युद्ध बाजीराव प्रथम के समय में हुआ

(v) हृदयनगर नगर की जागीर छत्रसाल ने बाला जी बाजीराव को भेंट की थी

(i) (✓) (ii) (✓) (iii) (✓) (iv) (×) (v) (✓)

2.6 उपयोगी पुस्तकें

1. G.S. Sardesai **:** New History of the Marathas Vol. 4

2. Grant Daff **:** History of Marathas Vol. 2

3. M.G. Ranade **:** Rise of Marathas Power

4. R.C. Majumdar **:** The Maratha Supermacy

2.7 अभ्यासकार्य

1. हुसैन अली तथा मराठों की संधि से मराठों को क्या लाभ हुए।
2. बाजीराव प्रथम की राजनैतिक उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।
3. उत्तर भारत की रानीति में मराठों के हस्तक्षेप के क्या परिणाम हुए? वर्णन करें।

इकाई–3

पेशवा एंव तत्कालीन राजनैतिक घटनाक्रम–2

इकाई की रूपरेखा

3.0 प्रस्तावना

3.1 उद्देश्य

3.2 परवर्ती पेशवाओं के अधीन राजनैतिक घटनाऐं

3.2.1 माधव राव प्रथम (1761–1772)

3.2.2 नारायण राव (1772–1773)

3.2.3 माधव राव नारायण (1774–1795)

3.2.3 बाजीराव द्वितीय (1795–1818)

3.3 सारांश

3.4 शब्दावली

3.5 स्वमूल्यांकन प्रश्न

3.6 उपयोगी पुस्तकें

3.7 अभ्यास कार्य

3.0. प्रस्तावना

इकाई 3 में 18वीं शताब्दी कें उत्तरा़र्द्ध की राजनितिक घटनाओ का अध्ययन किया हैं। इस काल में मुगलो के पतन से खाली स्थान की पूर्ति के लिए मराठो एवं यूरोपीय औपनिवेशिक शक्तियों के मध्य सर्वोच्चता हासिल करने के लिए संघर्ष का विवरण है। इसमें मराठो की आपसी कलह की जानकारी भी मिलती है।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई में उत्तरवर्ती पेशवाओं के काल की राजनैतिक गतिविधियों की जानकारी मिलती हैं।

- मराठो के आपसी कलह का विवरण है।
- मराठो तथा ब्रिटिश साम्राज्य के मध्य सर्वोच्चता हासिल करने के लिए संघर्ष की जानकारी मिलती हैं।
- मराठा राज्य के ब्रिटिश साम्राज्य के अंग बनने का वर्णन हैं।

3.2. परवर्ती पेषवाओं के अधीन राजनैतिक घटनाऐं

पानीपत के तृतीय युद्ध (1761) में मराठो की पराज्य और बालाजी बाजीराव की अकास्मिक मृत्यु से ऐसा लग रहा था कि मराठा शक्ति का अन्त होने ही वाला है। हिन्दुस्तान में मराठा नियन्त्रण के विरुद्ध असंतोष तथा यूरोपीय शक्तियो की महत्वाकांक्षा के कारण मराठो के लिए सबसे अधिक संकट का समय था। ऐसे समय में माधव राव पेशवा बने।

3.2.1 माधव राव प्रथम (1761-1772)

बाला जी बाजीराव की मृत्यु के पश्चात् माधव राव पेषवा बने। राजनैतिक अनुभव के कमी के कारण रघुनाथ राव को उनका एजेंट बनाया गया। रघुनाथ राव कमजोर मनोवृत्ति का व्यक्ति था। उस पर उसकी पत्नी आनंदीबाई का विशेष असर था।

नये पेशवा ने निजाम को पराजित किया, किन्तु रघुनाथ राव ने उसके साथ उदार शर्तों पर संधि कर ली। वह निजाम को अपने पक्ष मे करना चाहता था। मराठो की परिस्थितियों का लाभ उठाकर अग्रेंज व्यापारी भी उन पर हावी होना चाहते थे।

हैदर अली ने कुछ मराठा प्रदेशो (सीर आदि) पर अधिकार कर लिया। सीर कर्नाटक मे मराठो की सैन्य सामग्री एवं रजद का केन्द्र था। माधव राव ने कर्नाटक का अभियान किया। इसी समय सत्ता पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए माधव राव और रघुनाथ राव मे गृह–युद्ध आरम्भ हो गया। माधव राव ने दूरदर्शिता का परिचय देते हुए रघुनाथ राव से समझौता कर लिया।

1736 मे मराठो ने निजाम को पराजित किया। इसके पश्चात् माधव राव ने स्वतंत्र रूप से कार्य करना प्रारम्भ किया। रघुनाथ राव पेशवा के कार्यो के व्यवधान रहा। 1768 मे पेशवा ने रघुनाथ राव को पूना मे बंदी बना लिया। 1772 मे माधव राव की अकाल मृत्यु के समय, माधव राव और रघुनाथ राव में समझौता हो गया। माधव राव ने नारायण राव के साथ अच्छे व्यवहार का वचन लिया।

माधव राव को उत्तर–भारत की राजनीति में रुचि न होते हुए भी अपने दायित्वों का अहसास था।उसने उत्तर–भारत में मराठा सत्ता को मजबूत करने का भार मल्हार राव होल्कर और महाद जी सिंधिया को सौंपा। माधव राव की उत्तर–भारत सम्बन्धी नीति की पराकाष्ठा की, जब महादजी ने अपने संरक्षण में शाहआलम को दिल्ली की गद्दी पर बैठाते है।

3.2.2 नारायण राव (1772–1773)

माधव राव की मृत्यु के बाद नारायण राव पेषवा बने। रघुनाथ राव ने शडयंत्र कर नारायण राव की हत्या करा दी। नारायण राव की मृत्यु के बाद मराठा सरदारो मे मतभेद पैदा हो गये। रघुनाथ राव स्वंय पेषवा की गद्दी प्राप्त।करना चाहता था। नाना फडनवीस के नेतृत्व मे मराठा सरदारो ने विरोध किया। रघुनाथ राव ने गद्दी प्राप्त करने मे असफल होने पर अंग्रेजो से सहायता मांगी। अंग्रेजो को मराठो के आन्तरिक मामले मे हस्तक्षेप करने का अवसर मिल गया।

3.2.3 माधव राव नारायण (1773–1795)

नारायण राव के मरणोपरान्त जन्में पुत्र माधव राव नारायण को पेशवा बनाया गया। रघुनाथ राव ने माधव राव नारायण के अधिकार को चुनौती दी, किन्तु नाना फडनवीस के सन्मुख उसकी एक ना चली। हताश होकर रघुनाथ राव अंग्रेजो की शरण में चला जाता हैं। कम्पनी के साथ रघुनाथ राव ने सूरत की संधि (1775) भी की। कम्पनी को रघुनाथ राव के रुप में एक कठपुतली व्यक्ति मिल गया। उन्हें आशा थी, कि पूना मे भी बंगाल की भांति शासन करने मे वह सफल हो जायेगें।

सूरत संधि के अनुसार कम्पनी रघुनाथ राव को पेशवा बनायेगी तथा बदले मे उसे सालसेर और बजीन नगर मिलेंगें। कम्पनी की सहायता लेकर रघुनाथ राव पूना चला, 1775 मे अर्रास में अनिर्णायक युद्ध हुआ।

कलकत्ता परिषद् ने जो बम्बई परिषद से उच्चतम थी, ने सूरत की संधि अस्वीकार कर दी। उसने कर्नल को आपटन को पूना भेजा, जिसने 1776 में पुरन्दर की संधि की। जिसके अनुसार दोनो दलो में शांति स्थापित हो गयी, यद्यपि सालसेट कम्पनी के पास ही रहने दिया जायेगा। लन्दन स्थित डायरेक्टरो ने सूरत की संधि को पुर्नजीवित कर दिया। इससे उत्साहित होकर बम्बई से सेना भेजी गयी। मराठो एंव अंग्रेजों में कई युद्ध हुए। अन्ततः सिंधिया के प्रयास से मराठो और अंग्रेजों के मध्य सालबाई नामक स्थान पर 1782 में संधि हो गयी। इसके अनुसार दोनों ने विजित प्रदेश छोड दिये। केवल सालसेट अंग्रेजों के पास बना रहा। अंग्रेजो ने माधव राव नारायण को पेशवा स्वीकार कर लिया। कम्पनी और मराठो को एक दूसरे की शक्ति का परिचय मिल गया परिणामस्वरूप अगले 20 वर्षो तक दोनो के मध्य शांति बनी रही।

3.2.4 बाजीराव द्वितीय (1795-1818)

माधव राव नारायण ने 1795 में आत्महत्या कर ली। इसके पश्चात् दौलत राव सिंधिया और नाना फडनवीस ने कठपुतली पेशवा के रूप मे बाजीराव द्वितीय को गद्दी पर बैठाया। 1800 में नाना फडनवीस की मृत्यु के बाद पेशवा बाजीराव द्वितीय ने शडयंत्र रचने तथा मराठा सरदारो में झगडे करवाने प्रारम्भ कर दिये। दौलत राव सिंधिया और जसवंत राव घेलकर दोनो ही पूना में अपना प्रभाव जमाना चाहते थे। सिंधिया प्रभुत्व जमाने मे सफल रहा। पेशवा ने 1801 में जसवंत राव के भाई बिट्ठू जी की हत्या करवा दी। होल्कर ने पूना पर आक्रमण किया तथा पेशवा और सिंधिया की सम्मलित सेनाओ को पराजित किया तथा पूना पर अधिकार कर लिया और विनायक राव को पूना की गद्दी पर बैठाया। बाजीराव ने बसीन में शरण ली और अंग्रेजों के साथ संधि कर ली। जिसके अनुसार पेशवा ने अंग्रेजीं संरक्षण प्राप्त कर लिया। इस संधि से अंग्रेजो को राजनैतिक लाभ हुआ। मराठा संघ का प्रमुख नेता सहायक संधि में बंध गया। मराठा सरदारो ने इसका विरोध किया, और पराजित होकर अपमानजनक संधिया करनी पडी। किन्तु मराठा शक्ति अभी समाप्त नहीं हुई थी। अंग्रेंज भारत में अपनी सर्वोच्चता स्थापित करना चाहते थे। हेस्टिंग ने पिन्डारियो के विरुद्ध अभियान से मराठो के प्रभुत्व को चुनौती दी। विवश होकर बाजीराव द्वितीय ने मराठा सरदारो की सहायता से अंग्रेजो का विरोध किया, परन्तु मराठे अंग्रेजो से पराजित हुए। पेशवा के प्रदेश का विलय कर लिया गया, षेष छोटे–छोटे राज्य कम्पनी के अधीन हो गये।

3.3. सारांश

इस इकाई मे मराठा राज्य पर ब्रिटिश आक्रमण और आधिपत्य की प्रक्रिया समझ सकते है। अंग्रेज व्यापारिक हितो के लिए इन प्रदेशो की ओर आकृष्ट हुए थे, और आपसी संर्घष और राजनैतिक अस्थिरता का लाभ उठाकर, इन इलाको पर अंग्रेजो ने अपना अधिपत्य स्थापित कर लिया। भारतीय रियासतो की अंदरूनी कमजोरी के कारण ब्रिटिश साम्राज्यवाद मजबूत हुआ, और भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना की गयी।

3.4. शब्दावली

सहायक संधि	:	अंग्रेजों तथा देशी राज्यों के मध्य संधि
पिण्डारी	:	
सर्वश्रेष्ठता	:	सबसे श्रेष्ठ शक्ति
साम्राज्यवादी	:	साम्राज्य विस्तार की नीति

3.5 स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) मराठों ने निजाम को 1765 में पराजित किया

(ii) पेशवा नारायण राव की हत्या रघुनाथ राव ने करवा दी

(iii) माधव राव नारायण ने आत्म हत्या कर ली

(iv) सलबाई की संधि 1775 में हुई

(v) सूरत की संधि कम्पनी ने रघुनाथ राव से की।

(i) (×) **(ii)** (✓) **(iii)** (✓) **(iv)** (×) **(v)** (✓)

3.6 उपयोगी पुस्तकें

1. ग्रान्ट डफ : हिस्ट्री ऑफ मराठा, अवस 2
2. जी.एस सरदेशाई : मेन करन्ट ऑफ मराठा हिस्ट्री
3. जी.एस सरदेशाई : न्यू हिस्ट्री ऑफ मराठा पिपुल
4. एच.एच डाडवेल : क्रेम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया

3.7 अभ्यास कार्य

1. पानीपत के तृतीय युद्ध के पश्चात् मराठों ने किस नीति का अनुसरण कर अपने को भारत की प्रमुख शक्ति के रूप स्थापित किया।
2. सूरत की संधि से कम्पनी का क्या लाभ हुआ।
3. अंग्रेजों ने मराठों पर कैसे प्रभुत्व स्थापित कर लिया।

इकाई–4

जाट, बुन्देलों एंव अन्य

इकाई की रुपरेखा

4.0. प्रस्तावना

4.1. उद्देश्य

4.2. जाट

4.2.1. बुन्देला

4.2.2. अन्य

4.3. सारांश

4.4. शब्दावली

4.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

4.6. अभ्यास कार्य

4.0 प्रस्तावना

इस इकाई में मुगल साम्राज्य के प्रति उत्तर भारत में व्याप्त असंतोष ओर विद्रोहों का अध्घयन करतें हे! उत्तरी भारत में विद्रोह किसानों के शोषण तथा ओरंगजेब के दक्षिण अभियान में फॅस जाने के कारण प्रारम्भ हुआ। विद्रोह मुगल साम्राज्य के लिए कोई नई घटना नही थी। अकबर के समय में भी ऐसे विद्रोह होते थे किन्तु वे कुचल दिए जाते थे। परन्तु ओरंगजेब के काल में ऐसा नही हो सका।

4.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान सकेगे कि :

- ❖ जाट , बुन्देला एंव अन्य विद्रोहों क
- ❖ तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियाँ कैसी थी
- ❖ विद्रोहो का मुगल साम्राज्य साम्राज्य पर क्या प्रभाव पड़ा
- ❖ मुगल साम्राज्य में किसानों का शोषण।

4.2. जाट

जाट,बुंदेला,सतनामी और सिक्ख विद्रोह मुगल साम्राज्य के पतन में किस हद तक अपनी भूमिका अदा करते है, इसे समझने के लिए आवश्यक है, उन

परिस्थितयों को समझना जिनमें ये विद्रोह हो रहे हैं और मुगल शासक नियंत्रण स्थापित कर पा रहे हैं।

मुगलशासक वर्ग में निहित अंर्तविरोध के अलावा शासक वर्ग और किसानों के बीच में भी अंर्तविरोध व्यापत है। शासक वर्ग के दीर्घकालीन हितों के लिए आवश्यक है, कि किसानों के पास पर्याप्त अधिषेष बचा रहें, परन्तु जागीदार की नियुक्त अल्पकाल के लिए होती है। वह किसानों से अधिक वसूलना चाहते हैं। जिससे किसानों के साथ–साथ शासक वर्ग के हित भी प्रभावित होते है। अत्यधिक शोषण की स्थिति में किसान जमीन छोड़ कर माग सकते है। जबकि जागीरदार का स्वार्थ यही का कि वह ज्यादा से ज्यादा किसानों से वसूले।

उत्तर भारत में विद्रोह किसानों के शोषण के कारण हुए। किसान विद्रोह कोई नई घटना नही की। अकबर के काल में, डॉ. नकवी द्वारा प्रस्तुत सारणी में 144 विद्रोह बताए है, परन्तु वे हर बार के कारण परिस्थितियॉ गम्भीर हो गयी और कुमुक मुष्किल से ही मिलती थी।

4.2.1 बुन्देला

जाटों में सत्ता के प्रति अवज्ञा की प्रवृत्ति औरंगजेब के शासन काल से पहले भी दिखाई देती है। उन्होने लौटती हुई सेनाओं पर, उनके आंतक और यश की परवाह किये बिना, लूटने के लिए पीछे से धावा बोले। इस प्रकार की गतिविधियों के उदाहरण गजनी के सुलतान महमूद, नादिरशाह आदि के सन्दर्भ में भी मिलते है। बाबर के संस्मरणों में भी जाटों की ऐसी गतिविधियों का उल्लेख मिलता है।

औरंगजेब के काल में जाट दिल्ली और आगरा के निकटवर्ती खेतों में लूटपाट करते थे। 1669 में तिल्नपख के जमींदार गोकुल के नेतृत्व में मथुरा के जाटों ने विद्रोह कर दिया और मथुरा के मुगल फोजदार की हत्या कर दी। औरंगजेब स्वयं इस विद्रोह को दबाने के लिए रवाना हुआ। खूनी संघर्ष के बाद गोकुल को बंदी बना लिया गया और उसे मृत्युदंड दिया गया।

औरंगजेब के दक्षिण में व्यस्तता का लाभ उठाकर 1680 ई0 में जाटों ने संगठित हों मुगलों के खिलाफ विद्रोह कर दिया। उन्होनें किसे के चारो तरफ खाइयाँ बना ली और मिटटी की दीवार को मजबूत कर लिया। इस बार जाटों का नेतृत्व राजाराम और उसका भतीजा चूडामन कर रहा था। इनके विद्रोह के मुख्य केन्द्र सिनसीनी और सौंधी था। यहाँ उन्होनें मिटटी के मजबूत किले बना लिये थे। दिल्ली आगरा के आस पास जाटों ने लूटपाट शुरु कर दी और संचार व्यवस्था को भी नष्ट कर दिया। उन्होनें मुगल शाही परिवारों को भी लूटना शुरू कर दिया। राजस्व अधिकारियों को निकाल दिया। चकला मथुरा मे वात पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिए। 1686 में जाट आगरा दिल्ली के मध्य क्षेत्र में शक्तिशाली हो गये। स्थिति भी गम्भीरता को देखते हुए औरंगजेब ने खान–ए–जहाँ कोकलताष को विद्रोह कुचलने के लिए भेजा, किन्तु वह असफल रहा। 1688 तक जाट इतने शक्तिषाली हो चुके थे कि उन्होने अकबर के मकबरे में लूटपाट की और उसे नष्ट कर दिया। 1690 में बिशन सिंह ने सिनसिनी पर कब्जा कर लिया। इसके पश्चात् सौंधी ने भी बिशन सिंह की अधीनता स्वीकार कर ली।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद चूडामन के नेतृत्व में जाटों ने विद्रोह किया और वह भरतपुर में जाट राज्य स्थापित करने में सफल रहा।

जाटों के विद्रोह में सगोत्रता (kinship) तथा राजनैतिक संगठन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। जाटों ने अपने को कुल के आधार पर संगठित कर लिया था। जाटों के विद्रोह का नेतृत्व मुख्यता जमींदारों ने किया। इनका उद्देश्य अधिक स्वायत्ता प्राप्त करना था।

इब्राहिम लोदी ने 1517 ई० में अपने भाइयों के खिलाफ सर्वखाप की मदद माँगी, तो सर्वखाप ने उसके सामने कुछ माँगें रखी। जैसे सर्वखाप अपनी गतिविधियों के लिए स्वतंत्र हो, सर्वखाप क्षेत्र में हिन्दू मनसबदार को नियुक्त किया जाये आदि। 1579 में अकबर के समक्ष भी इन माँगों के अलावा कुछ नई माँगों के लिए दरख्वाज़ दी गयी। खाप नेता ही अपने गाँव से राजस्व इकट्ठा करें, खाप क्षेत्र का प्रशासनिक अधिकारी खाप क्षेत्र से ही नियुक्त किया जाये आदि।

इस प्रकार जाट लगातार ज्यादा स्वायत्तता की माँग करते हैं। औरंगजेब की दक्षिण में व्यस्तता का लाभ उठाकर जाटों ने न केवल विद्रोह कर दिया बल्कि गोजा, गूजर, मीना, मेव, भूमिया जमींदारों के साथ मिलकर जागीरदारों के खिलाफ एक मोर्चा बना लिया। परिणामस्वरूप जाटों की जमींदारी में बहुत वृद्धि हुई, विषे'ाकर दोआब में।

4.2.2 अन्य

बुन्देला का विद्रोह मुगलों द्वारा अधिकारिक राज्योंको अपने अधीन करने की नीति के विरूद्ध अपनी संप्रभुता को बचाने का प्रयास है। मधुकर शाह पहली बार मुगलों से टकराए। बुन्देलों की आक्रामक गतिविधियों से बादशाह अकबर अप्रसन्न हो गये। मुगल सेना ने कई बार पराजित किये।

मधुकर शाह के बाद उसका पुत्र रामशाह ओरछा भी गद्दी पर बैठा। किन्तु उसके छोटे भाई वीर सिंह देव बुन्देला को सलीम का समर्थन प्राप्त था। जहाँगीर जब गद्दी पर बैठा तो उसने वीर सिंह देव को ओरद्दा का राजा बना दिया और रामशाह के चंदेरी भेज दिया। वीर सिंह देव के पश्चात् जुझारू सिंह उसका उत्तराधिकारी बना। वह शाहजहाँ के राज्यारोहण के समय आगरा से ओरद्दा चला गया। इससे शाहजहाँ नाराज हो गया। जुझारू सिंह ने माफी माँग ली और महाबत खां के मातहत नौकरी कर ली। दक्कन से वापस आपे पर जुझारू सिंह ने चैरागढ़ का किला छीन लिया। इससे बादशाह नाराज हो गया। मुगलों ने 1635 ई० में ओरद्दा जीन लिया और चंदेरी देवी सिंह को सौंप दी गयी। जुझारू सिंह के विद्रोह को दबाने में चंदेरी के देवी सिंह, दतिया के भगवान राव आदि ने मुगलों को सक्रिय सहयोग दिया।

बुन्देला विद्रोह के दूसरे चरण की शुरूआत चंपतराय के साथ होती है। जब ओरद्दा मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया तो चम्पत राय ने जुझारू सिंह के लड़के पृथ्वीराज का समर्थन किया। वह अचानक मुगल ठिकानों पर हमला करता और संचार व्यवस्था भंग कर देता, किसानों को वहाँ से भगा देता। चंपतराय की गतिविधियों के कारण स्थानीय जनता का समर्थन नहीं मिला क्योंकि अतंतः सबसे ज़्यादा क्षति उन्हें ही उठानी पड़ती थी। शाहजहाँ ने इस समस्या से निपटने के लिए जुझारू सिंह के छोटे भाई पहाड़ सिंह को अधिक मनसव देकर स्थापित किया। चंपतराय ने समझदारी दिखाते हुए पहाड़ सिंह की सेवा में शामिल हो गया। इसके बाद वह दाराशिकोह की शाही सेवा में नौकरी करने लगा। उत्तराधिकार की लड़ाई में वह औरंगजेब से जा मिला। उसे 5000 का मनसब दिया

गया। ज बवह अपने देष वापस लौट रहा था तब औरंगजेब के संदेशावाहक ने उसका अपमान कर दिया। इस घटना के बाद उसने मालवा जाने वाले रास्ते को असुरक्षित कर दिया। औरंगजेब ने उसके खिलाफ कड़ी कार्रवाही की। चारों तरफ से घिरा देखकर चंपतराय ने अपना जीवन समाप्त कर लिया।

चंपत राय के पश्चात् उसका पुत्र छत्रसाल ने मुगलों का प्रतिरोध जारी रखा। प्रारम्भ में छत्रसाल और उसके भाई ने शाही सेना में नौकरी कर ली। पुरंदर की घेराबंदी और वीजापुर आक्रमण में सराहनीय सेवा की। मुगलों से नाराज होकर वह शिवाजी के पास चला गया। शिवाजी ने उसे बुन्देलखण्ड लौटने को कहा। छत्रसाल को बुंदेलखण्ड में चंपतराय के पुराने साथियों का सहयोग मिलने लगा। छत्रसाल के बढ़ते यश और शक्ति को देखकर मुगलों ने कईं लड़ाइयों में उसे पराजित किया। अंततः छत्रसाल ने आत्मसमर्पण कर दिया। उसे 4000 का मनसव दिया गया और राजा की उपाधि प्रदान की गयी। इसके पश्चात् मुगलों के साथ उसके सम्बंध अच्छे बने रहे।

हिन्दू फकीरों, जोगियों का एक दल सतनामियों के नाम से जाना जाता है। इसकी स्थापना नारनौल में हुई थी। इनकी जीविका कृषि एवं कम पूँजी का व्यवसाय था। परन्तु वह अत्याचार सहन नहीं करते थे। उनमें से अधिकांश अस्त्र–षस्त्र रखते थे। इनका विद्रोह 1672 में ग्रामीण असंतोष के रूप में आरम्भ हुआ। एक सतनामी का अपने खेत पर एक प्यादे से विवाद हो गया। प्यादे ने सतनामी के सिर पर वार किया। तत्पश्चात् इस पंथ के अनुयायियों ने प्यादे की बुरी तरह पिटाई कर दी।प्रारम्भ में इस विद्रोह ने सफलता प्राप्त की और नारनौल बेरात पर कब्जा कर लिया। बाद में इन्हें बड़ी सेना द्वारा ही विद्रोह का दमन हो सका। सिक्खों का विद्रोह 1675 में औरंगजेब द्वारा गुरू तेग बहादुर को मृत्युदंड देने के बाद शुरू हुआ। सिक्ख विद्रोही मुख्यता किसान वर्ग से थे, जो धार्मिक कारकों से भी प्रेरित जान पड़ते हैं। औरंगजेब की धार्मिक नीति को भी विद्रोह का कारण माना जाता है। इस विद्रोह का कईं क्षेत्रों में छोटे जमींदारों ने समर्थन दिया यद्यपि बड़े और मध्यम जमींदार इससे अलग रहे।

4.3 सांराश

आपने इस इकाई में पढ़ा की औरंगजेब के काल में परिस्थितयों ने मुगल साम्राज्य को कमजोर किया। औरंगजेब के दक्षिण में व्यस्त होने एवं असफल होने के प्रभाव उत्तर भारत में भी पड़ता है। उत्तर भारत में मुगल साम्राज्य के खिलाफ बगावतों ने साम्राज्य को इतना कमजोर कर दिया कि वह पतन की ओर अग्रसर हो गया।

4.4 शब्दावली

कुमुक	:	सैनिक सहायता
बगावत	:	स्थापित सरकार का सषस्त्र विरोध
जागीरदार	:	जागीर प्राप्त व्यक्ति
मनसब	:	मुगल सैनिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था में पद
अधिशेष	:	अधिक्य

4.5 स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) जाट विद्रोह का प्रारम्भिक नेता ..... था।

(ii) जाटों ने अकबर के मकबरे में लूट पाट की

(iii) जहाँगीर ने वीर सिंह देव को ओरछा की गद्दी पर बैठाया।

(iv) जहाँगीर ने गुरूतेग बहादुर को मृत्यु दण्ड दिया।

(i) (✓) (ii) (✓) (iii) (✓) (iv) (×)

4.6 संदर्भ/उपयोगी पुस्तकें

4.7 अभ्यास कार्य

1. जाट बुन्देला विद्रोह के समय की राजनैतिक परिस्थितियों का वर्णन करें।
2. जाट विद्रोह को दबाने के लिए मुगलों द्वारा किए गये प्रयासों का वर्णन करें।
3. मुगल बुन्देला सम्बंधों की विवेचना करें।

इकाई–5 भारत में औपनिवेशक शक्तियों का पारस्परिक संघर्ष–आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष के विशेष संदर्भ में।

इकाई की रूपरेखा

5.0. प्रस्तावना

5.1. उद्देश्य

5.2. आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष

- **5.2.1.** प्रथम आंग्ल–फ्रांसीसी युद्ध
- **5.2.2.** द्वितीय आंग्ल–फ्रांसीसी युद्ध
- **5.2.3.** तृतीय आंग्ल–फ्रांसीसी युद्ध
- **5.2.4.** फ्रांसीसी असफलता के कारण

5.3. सारांश

5.4. शब्दावली

5.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

5.6. सन्दर्भ पुस्तकें

5.7. अभ्यासकार्य प्रश्न

5.0. प्रस्तावना

इस इाकई में आप जान सकेंगे कि अधिकाधिक व्यापारिक लाभ कमाने के लिए अंग्रेजी और फ्रांसीसी कम्पनी एकाधिकार स्थापित करना चाहती हैं। जिससे वे भारत से सस्ते में माल खरीद सकें। परन्तु यह तभी सम्भव हो सकता था जब कम्पनी देष के कुछ भाग में राजनैतिक नियत्रंण स्थापित कर ले।

17वीं, 18वीं शताब्दी में अंग्रेज और फ्रांसीसियों के मध्य शत्रुता थी। जैसे ही यूरोप में दोनों देषों में युद्ध प्रारम्भ होता, वैसे ही संसार के प्रत्येक कोने में जहाँ ये दोनों कम्पनियाँ कार्य करती थी, में भी आपसी युद्ध प्रारम्भ हो जाता था।

5.1. उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप जान सकेंगे कि –

- ❖ दक्षिण भारत में स्थित दो विदेशी व्यापारिक कम्पनियों के मध्य संघर्ष के कारण जान सकेंगे।
- ❖ भारत के देशी राज्यों की अक्षमता को समझ सकेंगे।
- ❖ ब्रिटिश व फ्रांसीसी कम्पनियों के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- ❖ संघर्ष के परिणाम समझ सकेंगे।

5.2. आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष

18वीं शताब्दी में जब मुगल साम्राज्य पतन की ओर अग्रसर हो रहा था मुगल सूबेदार अधिक से अधिक स्वापत्ता प्राप्त करना चाह रहे थे, ऐसी राजनैतिक परिस्थितियों में यूरोपीय शक्तियाँ भी राजनैतिक नियत्रंण स्थापित कर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करना चाहती हैं। दक्षिण भारत में यह मौका आंग्ल और फ्रांसीसी कम्पनी को प्राप्त होता है।

दोनों ही कम्पनियाँ अपने प्रतिद्वंदी को हरा कर अपना अधिकार स्थापित करना चाहती हैं। अंततः अंग्रेज इसमें सफल रहते हैं।

5.2.1. प्रथम आंग्ल–फ्रांसीसी युद्ध (कर्नाटक का प्रथम युद्ध) (1746–48)

इस युद्ध की शुरूआत आस्ट्रिया के उत्तराधिकार के प्रश्न पर हुई। आंग्ल तथा फ्रांसीसी कम्पनी के मध्य 1746 ई० में युद्ध आरम्भ हो गया। बारनैट ने कुछ फ्रांसीसी जल पोत पकड़ लिए। डुप्ले पाण्डीचेरी का गवर्नर जनरल था, ने मॉरीशस स्थित फ्रांसीसी गवर्नर ला बर्डोन से सहायता माँगी। ला बर्डोन ने मद्रास घेर लिया। जल और थल दोनों ओर से घिरने के कारण मद्रास ने आत्म समर्पण कर दिया। ला बर्डोन ने हुरले से परामर्ष किये बिना, एक अच्छी रकम लेकर मद्रास अंग्रेजों को वापस कर दिया। हुरले ने इसे स्वीकार नहीं किया और पुनः 1746 में मद्रास पर कब्जा कर लिया। इसके पष्चात् फ्रांसीसियों ने फोर्ट सेन्ट डेविड, जो पाण्डीचेरी के दक्षिण में स्थित था, पर नियंत्रण स्थापित करने की कोशिश की। परन्तु फ्रांसीसी असफल रहे।

कनार्टक के नवाब ने अंग्रेजों और फ्रांसीसियों को लड़ता देख, उन्हें युद्ध बन्द करने का आदेश दिया। डुप्ले ने नवाब को मद्रास जीत कर देने का वचन दिया। किन्तु हुरले ने अपना वचन पूरा नहीं किया। नवाब ने अपनी माँग मनवाने के लिए सेना भेजी। कैप्टन पैराडाइज के नेतृत्व में छोटी सी सेना ने नवाब की बड़ी सेना को पराजित कर दिया। इस विजय ने यूरोपीय के सामने स्पष्ट कर दिया। इस यूरोपीय सेना बड़ी भारतीय सेना को पराजित कर सकती है।

1948 में आस्ट्रिया के उत्तराधिकार का युद्ध समाप्त हो गया। परिणामस्वरूप आंग्ल फ्रांसीसी युद्ध भी समाप्त हो गया। दोनों कम्पनियाँ को एक दूसरे की शक्ति का आभास हो गया।

5.2.2. द्वितीय आंग्ल–फ्रांसीसी युद्ध (द्वितीय कर्नाटक युद्ध) (1751–55)

प्रथम आंग्ल फ्रांसीसी युद्ध के पश्चात् डुप्ले की राजनैतिक महत्वकांक्षा तीव्र हो गयी। यह युद्ध भारत में दोनों कम्पनियों के हितों के टकराव का परिणाम था।

हैदराबाद के निजाम आसफजहाँ की मृत्यु के पश्चात् नासिरजंग उसका उत्तराधिकारी बना। परन्तु नासिरजंग के भतीजे मुजफ्फरजंग ने उसके दावे को चुनौती दी। दूसरी ओर कर्नाटक के नवाब अनवरूद्दीन और उसके बहनोई चन्दा साहिब के बीच विवाद था।

हुरले ने इस राजनैतिक अव्यवस्था का लाभ उठाने के लिए, मुजफ्फर जंग को दक्कन की सूबेदारी और चन्दा साहिब को कर्नाटक की सूबेदारी के लिए समर्थन दिया। अतः अंग्रेजों को नासिरजंग और अनवरूद्दीन का समर्थन करना पड़ा। मुजफ्फर जंग, चन्दा साहिब और फ्रांसीसी सेनाओं ने अक्टूबर में अनवरूद्दीन को हरा कर मार डाला। 1750 दिसम्बर में नासिरगंज भी मारा गया।

मुजफ्फर जंग दक्कन का सूबेदार बन गया। 1751 ई० में कर्नाटक के नवाब बन गये। बुस्सी के नेतृत्व में एक फ्रांसीसी सेना की टुकड़ी हैदराबाद में तैनात कर दी गयी। यह काल डप्ले की राजनैतिक सफलता का काल था।

डुप्ले की सफलता से अंग्रेजों की स्थिति कमजोर हो गयी थी। अनवरूद्दीन के पुत्र मुहम्मद अली, त्रिचनापल्ली में शरण लिए था, जिसे फ्रांसीसी तथा चन्दा साहिब मिलकर भी जीत नहीं पाये। क्लाइव ने त्रिचनापल्ली पर दबाव कम करने के लिए कर्नाटक की राजधानी आरकाट को मात्र 210 सैनिकों की सहायता से जीत लिया। चन्दा साहिब पुन' अरकाट पर कब्जा नहीं कर सके। 1752 में स्ट्रिंगर लॉरेन्स ने त्रिचनापल्ली को बचा लिया और फ्रांसीसियों ने अंग्रेजी सेना के सामने हथियार डाल दिये।

डुप्ले की नीति से होने वाली धन हानि वाली धन हानि से फ्रंसीसी अधिकारी नाराज थे। उन्होंने डुप्ले को वापस बुला लिया। गेडेहू को डुरले का उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया। 1755 ई० में दोनों कम्पनियों में संधि हो गयी। स्थल पर अंग्रेजों की श्रेष्ठता सिद्ध हो गयी। कर्नाटक का नवाब मुहम्मद अली बन गया।

5.2.3. तृतीय आंग्ल–फ्रांसीसी युद्ध (कर्नाटक का तीसरा युद्ध 1758 –163)

यूरापे में 1756 ई० में सप्तवर्शीय भारत में दोनों कम्पनियों के मध्य शान्ति भी समाप्त हो गयी। फ्रांसीसी सरकार ने काऊंटडी लाली को 1758 ई० में भारत भेजा। वह 1758 ई० में पहुँता हैं 1758 ई० में ही लाली ने फोर्ट सेन्ट डेविड पर कब्जा कर लिया। इसके पश्चात् लाली ने मद्रास का घेरा डाल दिया, जिसे शक्तिषाली नौसेना के आने पर ही उठाया। लाली ने बुस्सी को हैदराबाद से वापस बुला लिया। इससे फ्रांसीसियों की स्थिति कमजोर हुई। पोकॉक के नेतृत्व में अंग्रेजी बेड़े ने फ्रांसीसी बेड़े को पराजित किया और हिन्द महासागर से लौटने पर बाध्य किया। 1760 ई० में आपर कूट ने लाली के नेतृत्व वाली सेना को पराजित किया। 1761 ई० में फ्रांसीसी पाण्डीचेरी वापस लौट आये। अंग्रेजों ने पाण्डीचेरी, जिंजी और माही पर भी कब्जा कर लिया। इस प्रकार आंग्ल–फ्रांसीसी प्रतिद्वन्द्विता में फ्रांसीसी सदा के लिए हार गये। यद्यपि युद्ध के पश्चात् पाण्डीचेरी व कुछ अन्य प्रदेश फ्रांसीसियों को वापस कर दिये गये। परन्तु वे उनकी किलेबंदी नहीं कर सकते थे।

5.2.4. फ्रांसीसी असफलता के कारण

आंग्ल–फ्रांसीसी प्रतिद्वन्द्विता के प्रथम चरण में फ्रांसीसी कम्पनी की स्थिति मजबूत रही परन्तु अन्त तक आते – आते फ्रांसीसी भारत से बाहर हो गये। भारत से डुरले को वापस बुलाना फ्रांसीसियों की भयंकर भूल साबित हुई। उसके उत्तराधिकारी उतने सक्षम नहीं थे। फ्रांसीसियों के पास अंग्रेजों के समान नौसेना का अभाव था। अंग्रेजों के पास क्लाइव, पोकॉक, सर आपर कूट जैसे योग्य सेनापति थे। बंगाल पर अंग्रेजों का अधिकार हो जाने से उनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हो गयी थी। यहाँ से प्राप्त धन का प्रयोग अंग्रेजों ने दक्षिण भारत में अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए किया।

5.3. सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ सकेगें कि आंग्ल–फ्रांसीसी संघर्ष का परिणामस्वरूप कर्नाटक के तीन युद्ध हुए। अंततः ब्रिटिश कम्पनी अपना वर्चस्व स्थापित करने में सफल रही। अंग्रेजों के पास कुशल सेना, मजबूत नौसेना

तथा श्रेष्ठ सेनापति थे। उन्हें इंग्लैण्ड की सरकार का भी समर्थन प्राप्त था। बंगाल विजय ने आर्थिक साधनों की पूर्ति की। इन युद्धों में फ्रांसीसियों तथा भारतीय शक्तियों की कमजोरियाँ भी उभर कर सामने आयीं।

5.4. शब्दावली

सूबेदार	:	पदाधिकारी
नवाब	:	शासक
फरमान	:	आदेश
उत्तराधिकारी	:	एक शासक के पश्चात् आने वाला दूसरा शासक

5.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) 1664 में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना हुई।

(ii) फ्रांसीसियों ने पहला कारखाना सूरत में स्थापित किया।

(iii) तृतीय आंग्ल – फ्रांसीसी युद्ध में अंग्रेजों ने तंजौर पर आक्रमण किया।

(iv) 1760 में आपर कूट ने लाली के नेतृत्व वाली सेना पराजित की।

(i) (×) (ii) (✓) (iii) (✓) (iv) (✓)

5.6. सन्दर्भ पुस्तकें

1. एच.एच. डॉडवेल : कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया
2. जी. बी. मालेषन : हिस्ट्री ऑफ द फ्रेंच इन इंडिया
3. लॉरेन्स : नेरेटिव ऑफ एंग्लो फ्रेंच कॉनफ्लिक्ट
4. एच. एच. डॉडवाल : डुरले एंड क्लाइव

5.7. अभ्यास कार्य प्रश्न

1. ईस्ट इण्डिया कम्पनी फ्रांसीसी कम्पनी से बेहतर थी। वर्णन करें।
2. प्रथम आंग्ल–फ्रांसीसी युद्ध में कर्नाटक के नवाब की भूमिका का वर्णन करें।
3. द्वितीय आंग्ल–फ्रांसीसी युद्ध में अंग्रेजों की तुलना फ्रांसीसियों से कैसे बेहतर हो गयी। वर्णन करें।
4. फ्रांसीसियों की असफलता के कारणों का उल्लेख करें।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

MAHY-114 ýHkkx&2ü

भारत का राजनैतिक इतिहास :
घटनायें एवं प्रक्रियाएँ

(1206 ई0–1947ई0)

खण्ड – 3

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का प्रादुर्भाव एवं विस्तार

इकाई – 1 **75&80**

ईस्ट इंडिया कम्पनी एवं भारत

इकाई – 2 **81–86**

ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण–1

इकाई – 3 **87–92**

ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण–2

इकाई – 4 **93–96**

ईस्ट इंडिया कम्पनी एवं क्षेत्रीय राज्य संघर्ष

इकाई – 5 **97–104**

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की विवेचना

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश प्रयागराज

परामर्श समिति — **MAHY-114**

प्रो0 सीमा सिंह — कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डा0 पी0पी0 दूबे — कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — आचार्य इतिहास एवं प्रभारी निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ सेराज मोहम्मद — आचार्य, इतिहास, श्री देवसुमन उत्तरखण्ड विश्वविद्यालय, गढ़वाल, उत्तराखण्ड

सम्पादक

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई 1–5)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2021

ISBN : 978-93-94487-88-8

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

इकाई 1

ईस्ट इंडिया कम्पनी एंव भारत

इकाई की रूपरेखा

1.0. प्रस्तावना

1.1. उद्देश्य

1.2. 18 वी शताब्दी में भारत की राजनैतिक ईस्ट इंडिया कम्पनी का भारत के साथ व्यापारिक संम्बध की शुरूआत

1.2.2. ईस्ट इंडिया कम्पनी का स्वरूप

1.2.3. ईस्ट इंडिया कम्पनी का ब्रिटिश सरकार से सम्बंध

1.3. सारांश

1.4. शब्दावली

1.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

1.6. सन्दर्भ/उपयोगी पुस्तके

1.7. अभ्यास कार्य प्रश्न

1.0. प्रस्तावना

इस इकाई में इंडिया कम्पनी के भारत के साथ व्यापारिक सम्बंधो का अध्धयन करते है। मुगल साम्राज्य की कमजोरी का लाभ उठाकर उसका स्थान गृहण करने के लिए देशी और यूरोपीय शक्तियों के मध्य संधर्ष होता है। जिसमें अन्ततः अंग्रेज सफल होते है। कम्पनी की प्रगति मुगल साम्राज्य के विघटन से आरम्भ हुई और भारतीय शासकों और व्यापारियों को प्रभावित कर व्यापार में एकाधिकार स्थापित करना चाहते है। इसके लिए कम्पनी चुंगी में छूट चाहती है। ईस्ट इंडिया कम्पनी उपहार, रिश्वत आदि तरीकों द्वारा भारतीय शासकों को अपने पक्ष में करने की कोशिश करती है। दूसरी और सैनिक शक्ति को भी मजबूत कर रही थी।

1.1. उद्देश्य

इस इकाई के अध्धयन के पश्चात् आप जान सकेंगे कि –

- ईस्ट इंडिया कम्पनी का स्वरूप कैसा है।
- ईस्ट इंडिया कम्पनी का भारत के साथ व्यापारिक सम्बंधों की चरण प्रगति को समझ सकेगें।

❖ कम्पनी के ब्रिटिश सरकार के साथ सम्बंधों को समझ सकेगें।

1.2. 18 वी शताब्दी में भारत की राजनैतिक स्थिति

औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् मुगल साम्राज्य शक्तिहीन हो गया। इस शक्ति शून्य को भरने के लिए भिन्न भिन्न देशी एंव विदेशी शक्तियाँ संघर्षरत् थी। अंततः इस संघर्ष में अंग्रेज सफल हुए और उन्होने भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना की। प्रारम्भ में अंग्रेजों ने व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धा में अधिकाधिक लाभ कमाने और कुछ विशेष छूटे प्राप्त करनें के लिए भारतीय मामलों में हस्तक्षेप करना प्रारम्भ किया। कम्पनी की प्रगति का प्रथम चरण मुगल साम्राज्य के विघटन से प्रारम्भ हुआ। मुगल सम्राट एंव उनके प्रतिनिधि यूरोपीय व्यापारियों से व्यापार करना चाहते थे। कम्पनी ने अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक ओर उपहार और रिश्वत द्वारा कोशिश की, दूसरी ओर अपनी सैनिक संख्या बढाकर और किलेबंदी करके अपनी शक्ति को मजबूत कर रहे थे।

1.2. 18वी शताब्दी में भारत की राजनैतिक ईस्ट इंडिया कम्पनी का भारत के साथ व्यापारिक संम्बध की शुरूआत

ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना के समय अंग्रेज व्यापारियों का उद्देश्य शुद्ध व्यापारिक था। 1623 में इन्डोनेशिया से अंग्रेजो को बाहर निकाले जाने पर उन्होने सम्राट जहाँगीर के दरबार में विशेष व्यापारिक अधिकार प्राप्त करने के लिए हॉकिन्स ओर फिर टॉमस रो के नेतृत्व में दूत मंडल भेजा। 1617 में अंग्रेज मुगल सम्राट से इस शर्त पर व्यापारिक अधिकार प्राप्त करने में सफल हुए कि वे पुर्तगालियों से मुगल जहाजों की रक्षा करेगे।

ईस्ट इंडिया कम्पनी अपने प्रारम्भिक दौर में सामान्य स्थिति में थी। 1687 तक इसका मुख्य व्यापारिक केन्द्र बना रहा। मुगलो के अंग्रेजो की स्थिति पाचक के समान थी। 1623 तक अंग्रेजो ने सूरत, भड़ौच, अहमदाबाद, आगरा, मूसलीपट्टम् में अपनी फैक्ट्रियाँ स्थापित कर ली। धीरे–धीरे इसके आसपास के इलाको पर भी अपना प्रभाव स्थापित करने का प्रयत्न किया।

1685 में तालीकोटा के युद्ध के पश्चात् विजयनगर के कमजोर हो जाने के कारण दक्षिण भारत में परिसिथितियाँ अंग्रेजों को मद्रास स्थानीय शासक से पट्टे में मिल गया। तब मुसलीपट्टम् की फैक्ट्री को मद्रास स्थानान्तरित कर लिया। कम्पनी ने यहाँ किलेबंदी की और फोर्ट का नाम सेंट जार्ज रखा। कम्पनी को मद्रास में प्रशासन करने एंव सिक्के डालनें का भी अधिकार मिल गया। मद्रास की रक्षा के लिए अंग्रेज युद्ध के लिए भी तैयार थे। 1668 में बम्बई प्राप्त होने से सूरत के स्थान पर बम्बई पश्चिमी भारत की मुख्य बस्ती बन गयीं। सूरत सूती और मलमल वस्त्र, मसालेशोरा, नील का मुख्य गोदाम बन गया। भड़ौच और बडौदा की फैक्ट्रियाँ स्थानीय उत्पाद एकत्रित करती थी। आगरा की फैक्ट्री मुगलों को लट्ठा बेचती थी।

अंग्रेजो ने अपना प्रभाव क्षेत्र का बंगाल, बिहार, उडीसा में विस्तार किया। बालासोर, हरिहरपुरा, हुगली, पटना, कासिमबाजार में फैक्ट्रियाँ स्थापित की। ये सभी व्यापारिक केन्द्र फोर्ट सेंट जार्ज के अधीन कर दिये। बंगाल में सुल्तान राजा शाहजहाँ का पुत्र ने 3000 रूपये वार्षिक कर के बदले कम्पनी को कुछ विशेषाधिकार प्रदान किये। किन्तु शूजा के उत्तराधिकारियों ने शण अधिकार को

नाचता नहीं प्रदान की। कम्पनी ने बंगाल के सूबेदार शायस्ता खाँ से 1672 में शुल्क में छूट प्राप्त की। 1680 में औरंगजेब ने कम्पनी से जजिया लेकर सूरत के अलावा सभी स्थानों में बिना सीमा–शुल्क दिये व्यापार करने की अनुमति दे दी। किन्तु स्थानीय अधिकारी कम्पनी को परेशान करते थे। कम्पनी ने सुरक्षा के लिए किले बंदी शुरू कर दी। कम्पनी ने औरंगजेब को कमजोर समझते हुए संघर्ष की नीति का अनुसरण किया। किन्तु वह पराजित हो गयी। सर जॉन चाइल्ड को औरंगजेब से माफी माँगनी पडी साथ ही 1.5 लाख रूपये का हर्जाना देना पडा। इसके बदले में औरंगजेब ने व्यापार करने की अनुमति दे दी। 1686 में अंग्रेजो ने हुगली को लुट लिया, हुगली और बालासोर में मुगलों पर आक्रमण किये। किन्तु परिणाम पूर्व नीति ही रहे। अंग्रेजों को मुगलों से पुनः माफी माँगनी पडीं। चटगाँव में मुगलों से पराजित होने पर 1690 में औरंगजेब से फिर समझोता कर लिया। कम्पनी ने पहले जैसे व्यापारिक अधिकार प्राप्त कर लिए।

जमींदार शोभा सिंह के विद्रोह से उत्पन्न परिस्थितियों की आड में अंग्रेजों ने कोठी की किलबंदी की तथा 1698 में 1200 रूपये दे कर तीन गाँव सुतनाती, कालीघाट कालीकट और गोविन्दपुर की जमीदारीं प्राप्त कर ली। कम्पनी ने इस नई किलेबंद बस्ती को फोर्ट विलयम नाम दिया तथा यहाँ के प्रशासन के लिए प्रेसीडेंट और कौंसिल की व्यवस्था की।

सन् 1717 में सम्राट फार्रूखसियर के फरमान से कम्पनी को व्यापारिक रियायते प्रदान की गयी।

- ❖ बंगाल में कम्पनी 30000 रूपये वार्षिक कर अदा कर निःशुल्क व्यापार कर सकेगी।
- ❖ कम्पनी कलकत्ता के आस–पास किराए पर भूमि ले सकेगी।
- ❖ कम्पनी हैदराबाद में व्यापार कर सकती थी।
- ❖ सूरत में 10000 रूपये अदा कर निःशुल्क व्यापार कर सकेगी।
- ❖ कम्पनी के बम्बई टकसाल में बने सिक्कों को मुगल साम्राज्य में चल सकेगें।
- ❖ ओर्म्स ने इस फरमान को मैग्नाकार्टा कहा।
- ❖ इस प्रकार कम्पनी भारत में शक्तिशाली बन गयी।

1.2.2. ईस्ट इंडिया कम्पनी का स्वरूप

ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना 1599 में 80 अंग्रेज व्यापारियों ने भारत से व्यापार करने लिए लंदन में की थी। जिसकों 1600 ई0 में व्यापार के लिए शाही अधिकार चार्टर पत्र मिल गया और समय–समय पर इस अधिकार चार्टर पत्र मिल गया और समय–समय पर इस अधिकार पत्र का नवीकरण किया जाता रहा। कम्पनी एक (joint-stock company) निजी कम्पनी थी जिसका मुख्य उद्देश्य व्यापार द्वारा अधिक धन कमाना था। कम्पनी की चार्टर के नवीकरण हेड सरकार को धन देना पडता था। भारत में व्यापार की सम्भावनाओं को देखते हुए इंग्लैण्ड के व्यापारियों ने एक नई कम्पनी की स्थापना की। 1702 में चार्टर ऑफ यूनियन के द्वारा दोनों कम्पनियों का विलय हो गया और नई कम्पनी का नाम पडा। दी यूनाइटेड कम्पनी ऑफ इंग्लैण्ड ट्रेडिग टू दी ईस्ट इंडीज। कम्पनी के संचालन हेतु कम्पनी के साझेदारों द्वारा प्रत्येक वर्ष 28 संचालन निर्वाचित होते थे।

1.2.3. ईस्ट इंडिया कम्पनी का ब्रिटिश सरकार से सम्बध

ईस्ट इंडिया कम्पनी एक निजी कम्पनी थी। 1600 में भारत से व्यापार करने के लिए चार्टर मिला था। कम्पनी को चार्टर की अवधि बढवाने के लिए सरकार को आर्थिक सहायता देनी पडती थी। 1708 तक कम्पनी सरकार की मुख्य ऋृणदाता थी। इंग्लैण्ड के लोग जो स्वतंत्र व्यापार के पक्ष में थे कम्पनी के एकाधिकार का विरोध करने लगे और विरोधी दल से मिल गये।कम्पनी ने सरकार का समर्थन प्राप्त करने के लिए सरकार को दिये जाने वाले ऋृण पर ब्याज दर कम कर दी। कम्पनी सरकार को चंदा भी देती थी। जिससे सरकार से कम्पनी के चार्टर की अवधि को बढा दिया।

कम्पनी व्यापारिक एकाधिकार को बनाये रखने के लिए तथा चार्टर के नवीकरण के लिए राजा और मंत्रियो की कृपा दृष्टि पर निर्भर की। कम्पनी काफी हद तक ब्रिटिश संसद के आदेशों का उल्लंधन करने तथा अपनी नीतियो का पालन करने में सफल हुई।

रेग्यूलेटिंग एक्ट द्वारा पहली बार सरकार कम्पनी पर अपनी सत्ता स्थापित करती दिखती है। इस एक्ट से ब्रिटिश सरकार का भारत से सम्पर्क बढा और भारतीय मामलों की जानकारी भी बढी। पिट्स एक्ट 1784 से सरकार का कम्पनी के मामलों में नियंत्रण बढ गया। कोर्ट ऑफ प्रोपरटीज साझेदारों का समूह अब भारत में कम्पनी की नीति को प्रभावित नहीं कर सकता था। बोर्ड ऑफ डायरेक्टर एक नियंत्रण मंडल बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के सहयोग से भारत से सम्बंधित मामलों पर निर्णय लेने लगा।

1.3. सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप समझ सकेगें कि ईस्ट इंडिया कम्पनी की स्थापना व्यापारिक लाभ कमाने के लिए इंग्लैण्ड के व्यापारियो ने निजी कम्पनी के रूप में की थी। जिससे ब्रिटिश सरकार ने निश्चित अवधि के लिए व्यापारिक एकाधिकार प्रदान कर दिये। जिन्हे समय–समय पर घूँस और अन्य तरीकों का प्रयोग कर बढवाया जाता रहा और कम्पनी के ब्रिटिश सरकार के साथ सम्बन्ध भी समय के साथ बदलते रहे। प्रारम्भ में सरकार कम्पनी की नीतियों में हस्तक्षेप नहीं करती है, किन्तु परवर्ती काल में बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के द्वारा नियंत्रण स्थापित कर लेती है।

1.4. शब्दावली:–

चार्टर	:	सरकार द्वारा प्राप्त व्यापार करने का अधिकार पत्र
बोर्ड ऑफ प्रोपर्टीज	:	
बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल	:	नियंत्रण मंडल
डायरेक्टर	:	निदेशक
एकाधिकार	:	व्यापार करने का किसी एक कम्पनी को अधिकार

1.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) सेंट फोर्ट जार्ज किला कलकत्ता में स्थित है।

(ii) 1765 में तालीकोटा का युद्ध हुआ।

(iii) सम्राट फार्रुखसीयर ने कम्पनी को व्यापारिक रियायतें प्रदान कीं।

(iv) 1605 में ईस्ट इंडिया कम्पनी को चार्टर मिला।

(v) ईस्ट इंडिया कम्पनी एक निजी व्यापारिक कम्पनी थी।

(i) (×) (ii) (✓) (iii) (✓) (iv) (×) (v) (✓)

1.6. उपयोगी पुस्तके

1. थाम्पसन एवं गैरिट–राइज एंड फुलफिलमेंट ऑफ ब्रिटिश रूल इन इण्डिया
2. एच. एच. डॉडवैल–कैम्ब्रिज हिस्ट्रा ऑफ इण्डिया

1.8. अभ्यास कार्य प्रश्न

1. ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने ब्रिटिश सरकार के सम्बन्धों की विवेचना करो।
2. 18वीं शताब्दी में भारत की राजनैतिक परिस्थितियों का वर्णन करें।

इकाई–2 ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार एंव सुदृढीकरण–1

इकाई की रूपरेखा

2.0. प्रस्तावना

2.1. उद्देश्य

2.2. ईस्ट इंडिया कम्पनी से पूर्व बंगाल

- 2.2.1. बंगाल में ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार
- 2.2.2. सिराजउद्दौला के साथ अंग्रेजो के सम्बंध
- 2.2.3. मीर जाफर के साथ अंग्रेजो के सम्बंध
- 2.2.4. मीर कासिम के साथ अंग्रेजो के सम्बंध
- 2.2.5. मीर कासिम के पश्चात्

2.3 सारांश

2.4 शब्दावली

2.5 स्वमूल्याकंन प्रश्न

2.6 सन्दर्भ / उपयोगी पुस्तकें

2.7 अभ्यास कार्य प्रश्न

2.0. प्रस्तावना

इस इकाई में अध्ययन करेगें कि किस प्रकार बंगाल में सत्ता नवाबों से अंग्रेजो के पास हस्तान्तरित हो गयी, और बंगाल में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की स्थापना हुई। बंगाल के नवाब और अंग्रेजो के मध्य व्यापारिक प्रतिस्पर्द्धा के कारण 18वीं सदी की मध्य की घटनाओं को समझ सकेगें। नवाबों के व्यक्तित्व तथा अधिकारियों मे व्याप्त भ्रष्टाचार, विश्वासघात, ने कैसे बंगाल में अंग्रेजो की विजय को सरल बना दिया।

2.1. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान सकेगें –

- ❖ अंग्रेजो की विजय के समय बंगाल की पृष्ठभूमि
- ❖ बंगाल के नवाब से अंग्रेजो को सत्ता का हस्तांतरण
- ❖ सत्ता हस्तांतरण मे सहायक कारक
- ❖ नवाब के अधिकारियों की प्रवृत्तियों को, जिसकें कारण बंगाल अंग्रेजो के अधीन चला गया।

2.2. ईस्ट इंडिया कम्पनी से पूर्व का बंगाल

यूरोपीय अर्थव्यवस्था में हो रहे परिवर्तनों (समांतवादी अर्थव्यवस्था से पूंजीवादी अर्थव्यवस्था की ओर, और फिर व्यापारिक पूंजीवाद से औद्योगिक पूंजीवाद की ओर हुए परिवर्तन) के परिणामस्वरूप भारत में उपनिवेश स्थापित करने के लिए यूरोपीय शक्तियों में प्रतिर्स्पद्धा की शुरूआत हुईं, जिसमें अन्ततः अंग्रेज सफल रहें।

18वीं सदी में बंगाल से यूरोप को कच्चे उत्पादों जैसे– शोरा, चावल, नील, काली मिर्च, रेशम, सूती कपडे आदि का व्यापार होता था। एशिया से ब्रिटेन को जाने वाले सामान में 60 प्रतिशत सामान बंगाल से जाता था। अतः बंगाल में अंग्रेजो की रूचि बढी। अंग्रेजो ने बंगाल, उडीसा मे व्यापारिक कम्पनियों की स्थापना की। और 1696 में कम्पनीं ने सुतनाति, कालीकट और गोविन्दपुर की जमींदारी भी प्राप्त कर ली। यहीं अग्रेजो ने किलेबन्द बस्ती कलकत्ता की स्थापना की।

17वीं शताब्दीं से ही ईस्ट इंडिया कम्पनी व्यापारिक विशेषाधिकार प्राप्त करने के लिए प्रयासरत थी। मुगल सम्राट फार्रूखसियर ने 3000 रूपये के वार्षिक कर के बदले कम्पनी को बंगाल में व्यापार करने की अनुमति प्रदान की। परन्तु बंगाल के सूबेदार इस प्रकार के विशेषाधिकार के पक्ष में नहीं थे। इससे बंगाल को राजस्व की हानि होती थी। इस फरमान की आड़ में कम्पनी के कर्मचारी निजी व्यापार पर भी कर अदा नहीं करते थें। इस प्रकार पारस्परिक हितों का टकराव नवाब और कम्पनी के मध्य 18वीं सदी के मध्य से ही दिखाई पडने लगता है। अंग्रेजो के व्यापारिक हित बंगाल की राजनैतिक स्थिरता के लिए खतरा बनते जा रहे थे, साथ ही प्रशासन की कमजोरियों ने स्थिति को और अधिक गम्भीर बना दिया।

नवाब अपनी शक्तियों के लिए निम्न समूहों पर निर्भर था –

- ❖ स्थानीय कुलीनवर्ग का समर्थन।
- ❖ हिन्दू अधिकारियों, जिनका वित्तीय प्रशासन पर नियंत्रण था।
- ❖ बडे–बडे जमींदारो, जो राजकोष को राजस्व देते थे, उनको सैनिक सहायता प्रदान करते थे, और कानून व्यवस्था बनाये रखते थे।
- ❖ वित्तीय घराने विशेषकर जगत सेठ, सहयोग की आवश्यकता नवाब को रहती थी।

उक्त गुटों की नवाबों से भिन्न–भिन्न अपेक्षायें थी। नवाब इनके मध्य संतुलन स्थापित करने में जब तक सफल रहे, तब तक संतुलन बना रहा। जैसे ही संतुलन बिगडा, वैसे ही बंगाल की राजनैतिक अस्थिरता स्पष्ट हो गयी।

2.2.2. सिराजउद्दौला के साथ अंग्रेजो के सम्बन्ध

अलीवर्दी खॉ के पश्चात्, उसका दौहित्र सिराजउद्दौला 1756 में बंगाल का नवाब बना। उसके उत्तराधिकार का विरोध घसीटी बेंगम, और पूर्णिया के नवाब शौकत जंग ने किया। नवाब के दरबारी, सेठ अमीचन्द, राय दुर्लभ आदि भी

उसके पक्ष में ना थे। नवाब को दूसरा खतरा अंग्रेजो से भी था। अंग्रेजो ने कलकत्ता की किलेबन्दी कर ली और परकोटे पर तौंपे तैनात कर दी।

कम्पनी के अधिकारी व्यापारिक विशेषाधिकारों का प्रयोग निजी व्यापार के लिए भी करते थे। कम्पनी ने भगौडे कृष्णदास (जो गबन का दोषी था) को कलकत्ता में शरण दी थी, और घसीटी बेंगम का समर्थन करते थे। इन कारणो से नवाब सिराजउद्दौला कम्पनी से नराज था। नवाब नें अंग्रेजो को विरोधी कार्यो को रोकने का आदेश दिया। परन्तु कम्पनी टालमटोल करती रही। इससे असन्तुष्ट हो कर नवाब ने कलकत्ता पर आक्रमण कर दिया। 5 दिन पश्चात् फोर्ट विलियम ने आत्मसमर्पण कर दिया।

कलकत्ता का समाचार जब मद्रास पहुँचा तो वहॉ के अधिकारियों ने राबर्ट क्लाइव के नेतृत्व में सेना कलकत्ता भेजी। जिससे अंग्रेजो की स्थिति मजबूत हो गयी। क्लाइव ने नवाब के दरबारी षड्यंत्रकारीं से समझौता कर उन्हें अपने पक्ष में कर लिया। कम्पनी ने मीर जाफर को नवाब बनाने का प्रलोभन दिया। इस प्रकार अंग्रेजो ने प्लासी के युद्ध से पूर्व ही विजय सुनिश्चित कर ली। इसके पश्चात् अंग्रेजो ने मुर्शीदाबाद की ओर प्रस्थान किया। 23 जून 1757 को प्लासी में दोनों सेनाओं मे संघर्ष हुआ। नवाब की सेना का नेतृत्व विश्वासघाती मीर जाफर कर रहा था। संघर्ष मे कम्पनी की विजय हुई। यह विजय श्रेष्ठ सैन्य शक्ति की विजय नहीं थी, अपितु नवाब के अधिकारियों के षड्यंत्र के कारण प्राप्त विजय थी।

2.2.3 मीर जाफर के साथ अंग्रेजो के सम्बन्ध

प्लासी की लडाई के पश्चात् मीर जाफर बंगाल का नवाब बना। मीर जाफर ने अंग्रेजो को बहुत सारा धन देकर संतुष्ट करने की कोशिश की। मीर जाफर ने अंग्रेजो को नजराने और हर्जाने के रूप मे 17,50,000 रूपये दिये। परन्तु वह कम्पनी की निरन्तर मॉगों को पूरा नहीं कर सका। उसे अन्य गम्भीर समस्याओं का सामना करना पडा। मिदनापुर के राजा राम सिन्हा और पूर्णिया के हिजीर अली जैसे जमींदार उसे अपना शासक मानने को तैयार नहीं थे। सैनिक वेतन ना मिलने से असन्तुष्ट थें। राय दुर्लभ की गतिविधियॉ भी संदेहास्पद थी, किन्तु उसे क्लाइव का समर्थन प्राप्त था। नवाब की आर्थिक स्थिति कमजोर थी और कम्पनी की मॉगें बढ रही थी। इन कारणों से अंग्रेज मीर जाफर से नाराज थें।

हॉलवेल ने मीर जाफर पर आरोप लगाया कि वह अग्रेज विरोधी गतिविधियों में संलग्न है, तथा डचों और मुगल राजकुमार अली गौहर से मिलकर अंग्रेजो के विरूद्ध शडयंत्र कर रहा हैं। उसका मुख्य अपराध धन ना देना था। उत्तराधिकार के प्रश्न पर मीर जाफर के पौत्र एंव दमाद मीर कासिम के विवाद था। नए गवर्नर वेन्सिटार्ट ने मीर कासिम का पक्ष लिया। मीर कासिम ने अंग्रेजो की वित्तीय कठिनाईंयों मे सहायता का वचन दिया, तथा स्वंय को नवाब बनाने के लिए अंग्रेजो से समर्थन मॉगा। अंग्रेजो ने मीर जाफर, जो अपना महत्व खो चुका था, के स्थान पर मीर कासिम का नवाब के पद के लिए समर्थन किया।

2.2.4 मीर कासिम के साथ के अंग्रेजो के सम्बन्ध

मीर कासिम ने नवाब बनने के पश्चात् प्रमुख अंग्रेज अधिकारियों को पुरस्कृत किया। कम्पनी की वित्तीय कठिनाईयों को दूर करने के बहाने लगभग 17 लाख रूपये प्राप्त किये। इसके अतिरिक्त उसने बर्दवान, मिदनापुर, चटगॉव के जिले कम्पनी को दे दिये। सिलहर के चूना व्यापार में कम्पनी को आधा भाग दे दिया। दक्षिण अभियान के लिए 5 लाख रूपये दिये।

सत्ता प्राप्त करने के पश्चात् मीर कासिम ने अपनी राजधानी मुर्शीदाबाद से मुंगेर स्थानान्तरित कर ली। सम्भवतः वह मुर्शीदाबाद के षडयंत्रमय वातावरण तथा कलकत्ता से दूर रहना चाहता था। उसने नौकरशाही का पुनर्गठन किया तथा सैनिक क्षमताओं को बढाने के लिए सेना का यूरोपीय पद्धति पर गठन किया।

मीर कासिम के शासन के कुछ माह ठीक से व्यतीत हुए। परन्तु शीघ्र ही मीर कासिम तथा अंग्रेजो के सम्बन्ध सामान्य नहीं रहे। बिहार के उप–सूबेदार राम नरायण नवाब की सत्ता स्वीकार नहीं करता था। नवाब की बार–बार आज्ञा पर भी उसने आय–व्यय का ब्यौरा नहीं दिया। उसे पटना के अंग्रेज अधिकारियों का समर्थन प्राप्त था। नवाब ने गवर्नर की सहमति के बिना उसे सेना से हटा कर मार डाला।

कम्पनी के दस्तक का प्रयोग अंग्रेज अधिकारियों द्वारा निजी व्यापार के लिए करने के कारण नवाब और अंग्रेजो के बीच तनाव था। इससे एक ओर जहॉ राजस्व की हानि होती थी, दूसरी ओर स्थानीय व्यापारियो को कम्पनी से कडी प्रतियोगिता का करना पडता था। कम्पनी के अधिकारी स्थानीय लोगो को अपना सामान कम दामों पर बेचने के लिए मजबूर करते थे। मैकाले लिखता हैं– "कम्पनी के सेवक वृक्षों के नीचे न्यायालय लगाते तथा मनमाना दण्ड दिया करते थें।"

नवाब तथा अंग्रेजो के बीच झगडा आन्तरिक व्यापार पर लगे करो को लेकर प्रारम्भ हुआ। मीर कासिम ने अन्ततः कठोर कार्यवाही की तथा सभी आन्तरिक कर हटा लिए। अब भारतीय व्यापारी भी अंग्रेज व्यापारियो के समान हो गये। अंग्रेज चाहते थे कि नवाब भारतीयों पर कर लगाये क्योंकि उसी अवस्था मे वे दस्तक का दुरूपयोग कर सकतें थे। मीर कासिम अंग्रेजो की अपेक्षाओ को पूरा करने में सफल नही रहा। अंग्रेजो ने नवाब को हटाने के लिए अवसर की तलाश शुरू कर दी। परन्तु मीर कासिम आसानी से समर्पण करने वाला ना था। उसने मुगल सम्राट शाह आलम तथा अवध के नवाब शुजाउद्दौला से मिलकर प्रतिरोध करने की कोशिश की। अन्ततः वह असफल रहा। बक्सर की लडाई ने अंग्रेजो की सैनिक श्रष्ठता स्थापित कर दी।

2.2.5. मीर कासिम के पष्चात्

मीर जाफर को पुनः बंगाल का नवाब बना दिया गया। उसने मीर कासिम के साथ अंग्रेजो के समझौते को स्वीकार कर लिया। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके अल्पवयस्क बेटे नजीमउद्दौला को नवाब बनाया गया। वास्तविक प्रशासन अंग्रेजो द्वारा नियुक्त नायब सूबेदार चलाता था।

बक्सर की लडाई के बाद क्लाइव को बंगाल का गवर्नर नियुक्त किया गया। उसने मुगल सम्राट शाह आलम से समझौता किया। जिसके तहत शाह आलम को इलाहाबाद के आस पास के क्षेत्र दिए गये। बादशाह ने बंगाल, बिहार, उडीसा की दीवानी प्रदान की। इस प्रकार अंग्रेजो को बंगाल के राजस्व और वित्तीय प्रशासन पर पूर्ण नियंत्रण मिल गया। सुरक्षा, कानून व्यवस्था और न्याय का उत्तरदायित्व नवाब के पास रहा। इस प्रकार नवाब की शक्ति पूर्णतः समाप्त हो गयी।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट हैं, कि बंगाल के नवाबो से कम्पनी को राजनैतिक सत्ता का हस्तांतरण क्रमिक रूप से हुआ।

2.3. सारांश

इस इकाई मे उस राजनैतिक प्रक्रिया का विवरण है, जिसके द्वारा बंगाल में राजनैतिक सत्ता का हस्तान्तरण बंगाल के नवाबो से अंग्रेजो को हुआ। 1757 तथा 1765 की घटनाओं के परिणामस्वरूप अंग्रेजो ने अपनी सर्वोच्चता स्थापित कर ली। प्रारम्भ में अंग्रेजो की रूचि बंगाल के संसाधनो तथा व्यापारिक क्षमताओं का प्रयोग करने मे थी, परन्तु अधिकारिक व्यापारिक लाभ कमाने की इच्छा से नवाब के साथ संघर्ष की शुरूआत हुई। बंगाल की अन्तर्निहित कमजोरियों का लाभ उठा कर अंग्रेजो ने बंगाल में अपनी सत्ता स्थापित की।

2.4. शब्दावली

दस्तक	:	ईस्ट इण्डिया कम्पनी की बंगाल में कर मुक्त व्यापार करने का अधिकार
पूंजीवाद	:	पूँजी पर आधारित व्यवस्था
फरमान	:	आदेश

2.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने 1700 ई० में कालीकट, सुतनाती और गोविन्दपुर की जमींदारी प्राप्त की।

(ii) सिराजउद्दौला 1756 में बंगाल का नवाब बना।

(iii) प्लासी के युद्ध में अंग्रेजों का नेतृत्व हॉलवेल ने किया।

(iv) सिराजउद्दौला के पश्चात् बगांल का नवाब बना।

(v) मीर कासिम ने राजधानी मुर्षीदाबाद से मुंगेर स्थानान्तरित कर ली।

(i) (×) (ii) (✓) (iii) (✓) (iv) (×) (v) (✓)

2.6. उपयोगी पुस्तकें

1. जी. वी. मालेसन – द डिसाइसिव बैटल ऑफ इंडिया
2. एच. एच. डाडवेल – कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया Vol. 5
3. पी. ई. राबर्टज – हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया
4. आर. एस. शर्मा – मेकिंग ऑफ मार्डन इंडिया

2.7. अभ्यास कार्य प्रश्न

1. प्लासी का युद्ध अंग्रेजों ने विश्वासघात से जीता। विवेचना करें।
2. मीर जाफर तथा अंग्रेजों के सम्बन्धों का वर्णन करें।
3. मीर कासिम के साथ अंग्रेजों के सम्बन्धों की विवेचना करें।

इकई–3

ब्रिटिश साम्राज्य का विस्तार एंव सुदृढीकारण–2

इकाई की रूपरेखा

3.0. प्रस्तावना

3.1. उद्देश्य

3.2. भारतीय राज्यो के साथ अंग्रेजो का सर्वोच्चता के लिए संघर्ष

3.2.1. मैसूर से संघर्ष

3.2.2. मराठो से संघर्ष

3.2.3. भारतीय राज्यो की असफलता के कारण

3.3. सारांश

3.4. शब्दावली

3.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

3.6. उपयोगी पुस्तकें

3.7. अभ्यास कार्य प्रश्न

3.0. प्रस्तावना

इस इकाई में दक्षिण भारत में ब्रिटिश साम्राज्वाद के विस्तार एंव सुदृढीकरण का अध्ययन करेगें। इस काल में भारतीय उपमहाद्वीपों में यूरोपीय शक्तियों का आगमन, राजनैतिक सर्वोच्चता प्राप्त करने के लिए यूरोपीय शक्तियों और भारतीय राज्यो के मध्य संघर्ष हुआ। जिसमें अन्ततः यूरोपीय शक्तियॉ सफल रही। इस इकाई में अंग्रेजो तथा मैसूर और मराठा राज्यों के मध्य संघर्ष का अध्ययन करेगें।

3.1 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से मैसूर और मराठा राज्य में ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार को समझ सकेंगे–

- ❖ मैसूर और मराठा राज्यो पर ब्रिटिश अधिपत्य के लिए होने वाले संघर्ष को समझेगें।
- ❖ मैसूर और मराठा राज्यो के ब्रिटिश साम्राज्य का अंग (हिस्सा) बनने की प्रक्रिया का वर्णन कर सकेगे।
- ❖ अंग्रेजो के खिलाफ भारतीय राज्यो की विफलता पर प्रकाश डाल सकेगे।

3.2. भारतीय राज्यो के साथ अंग्रेजो का सर्वोच्चता के लिए संघर्ष

18 वीं शताब्दी में भारत की विभिन्न शक्तियों के मध्य संघर्ष चल रहा था। यह संघर्ष न केवल औपनिवेशिक शक्तियों और भारतीय राज्यो के मध्य था, बल्कि भारतीय राज्यो में परस्पर सर्वोच्चता के लिए था। विभिन्न शक्तियो के मध्य संघर्ष का मुख्य कारण साम्राज्यवादी प्रकृति थी। सभी शक्तियॉ अपने राज्य की सीमओं के विस्तार की इच्छा रखती थी। जिसका परिणाम युद्ध के रूप में सामने आता था। इस काल में क्षेत्रीय विस्तार आय के स्त्रोतों में वृद्धि करने का एक तरीका था। जब किसी राज्य को राजकोश में वृद्धि करनी होती या राजस्व में वृद्धि करनी होती थी, तो वह नये क्षेत्रो पर अधिपत्य जमाता था। मराठा अपनी आय के लिए चौथ और सरदेशमुखी पर निर्भर करते थें। मराठे आय में वृद्धि के लिए निरन्तर नए क्षेत्रो पर चौथ के अधिकार का दावा करते थे।

इसके अतिरिक्त हैदर अली के मैसूर का वास्तविक शासक बनने से दक्षिण भारत में विशेष स्थिति उत्पन्न हो गयी। दक्षिण में मराठो, निजाम, कर्नाटक का नवाब प्रमुख शक्ति के रूप में थे। हैदर के शासक बनने के बाद मैसूर भी फ्रांसीसियो द्वारा तोपखानो का विकास कर अपनी शक्ति में वृद्धि कर रह था। हैदर अली ने फ्रांसीसियो की सहायता से डिंडीगुल में शस्त्रागार स्थापित किया। शक्तिशाली मैसूर, मराठो, निजाम, कर्नाटक के नवाब के लिए खतरा था। सभी राज्य अपने क्षेत्रीय विस्तार की प्रक्रिया में थे। सुदृढ मैसूर क्षेत्रीय विस्तार की प्रक्रिया मे बाधा उत्पन्न कर रहा था। मराठा और निजाम ने मैसूर के खिलाफ संयुक्त मोर्चा बनाया, जिसमे अंग्रेजो को भी शमिल किया गया। इस प्रकार भारतीयो शक्तियों के आपसी संघर्ष के कारण भारत के आन्तरिक मामलो में अंग्रेजो को हस्क्षेप करने का मौका मिल गया।

मालाबार तट काली मिर्च और इलायची के लिए प्रसिद्ध था, जिस पर हैदर अली का अधिकार था। और उसके साथ अंग्रेजो के संबन्ध अच्छे नहीं थे। अतः अंग्रेजो के व्यापार के लिए यह स्थिति अच्छी नहीं थी। मैसूर से मद्रास के लिए भी खतरा था। मद्रास अंग्रेजो का व्यापारिक केन्द्र था। 1784 के बाद पश्चिमी भारत के तटों से कम्पनी के सूती वस्त्र व्यापार मे वृद्धि हो रही थी, और यह क्षेत्र मराठो के नियंत्रण मे था। अतः अंग्रेज निर्बाध व्यापार के लिए देशी शक्तियो को अपने रास्ते से हटाना चाहते थे। इसके अतिरिक्त मराठे और मैसूर आधुनिक अस्त्रो का भी विस्तार कर रहे थे। मैसूर ने तो फ्रांसीसियो से संधि भी की थी। यह स्थिति अंग्रेजो के लिए खतरनाक थी। यूरोप में नेपोलियन ब्रिटेन के लिए एक बडे खतरे के रूप मे उपस्थित था। इस स्थिति से निपटने के लिए ब्रिटेन को अधिकाधिक धन की आवश्यकता थी। अपने व्यापारिक हितो की रक्षा के लिए ब्रिटेन राजनैतिक हस्तक्षेप के पक्ष में था।

भारतीय राज्यो के पारस्परिक संघर्ष से उत्पन्न राजनैतिक अस्थिरता की स्थिति ने अंग्रेजो को व्यापारिक लाभ में वृद्धि तथा आन्तरिक मामलो मे हस्तक्षेप करने का अवसर प्रदान किया।

3.2.1. मैसूर से संघर्ष

बंगाल के विजय से उत्साहित अंग्रेजो ने हैदराबाद को निजाम, मराठो तथा कर्नाटक के नवाब के साथ मिलकर मैसूर की शांति को समाप्त करने के लिए सम्मिलित मोर्चा बना लिया। 1766 मे अंग्रेजो ने हैदराबाद के निजाम तथा मराठो

से संधि कर ली तथा हैदर अली पर आक्रमण कर दिया। हैदर अली ने कूटनीति का प्रयोग करते हुए मराठो को धन का लालच देकर और निजाम को प्रदेश का प्रलोभन देकर अंग्रेजों से अलग कर दिया, और फिर कर्नाटक पर आक्रमण कर दिया। कुछ अनिर्णित युद्धो के पश्चात् हैदर अली ने मद्रास का घेरा डाल दिया। 1769 में उसने मद्रास काउन्सिल को अपनी शर्तो पर संधि करने के लिए विवष किया। इसमे दोनो पक्षो ने तीसरी शक्ति के आक्रमण की दशा मे एक दूसरे की सहायता का वचन दिया।

लेकिन अंग्रेज इस संधि पर कायम नहीं रहे। 1771 मे मराठो ने मैसूर पर आक्रमण किया तब अंग्रेजो ने सहायता नही की। इसके पश्चात् मैसूर और अंग्रेजो के बीच सम्बन्ध तनावपूर्ण हो गये। माही पर अंग्रेजो के कब्जे से द्वितीय आंग्ल–मैसूर संघर्ष शुरू हो गया। क्योंकि हैदर अली माही को अपने संरक्षण में समझता था। हैदर अली ने मराठो तथा निजाम को अपने पक्ष मे मिलाकर अंग्रेजो के विरूद्ध एक संयुक्त मोर्चा बना लिया। तथा अंग्रेजो को पराजित कर अर्काट जीत लिया। इसी बीच अंग्रेजो ने निजाम तथा मराठों को हैदरअली से अलग कर उसकी स्थिति कमजोर कर दी, और 1781 मे पोर्ट नोबा में हैदर अली को पराजित किया। द्वितीय आंग्ल–मैसूर युद्ध के दौरान 1782 मे हैदर अली की मृत्यु हो गयी। उसके पुत्र टीपू सुल्तान ने युद्ध जारी रखा। किन्तु निश्चित विजय कोई नहीं प्राप्त कर सका। अन्ततः दोनो पक्षो मे 1784 मे मंगलौर की संधि हो गयी।

1786 मे कार्नवालिस भारत का गर्वनर जनरल बनकर आया। उसने कूटनीति का प्रयोग करते हुए मराठो तथा निजाम को अपने पक्ष में कर लिया। कोचीन के प्रश्न पर टीपू ने ट्रावनकोर पर आक्रमण किया। अंग्रेज जो कि मौके की तलाश में थे, ने ट्रावनकोर का पक्ष लिया। इस तरह तृतीय आंग्ल–मैसूर युद्ध प्रारम्भ हुआ। कार्नवालिस वैल्लोर और आम्बूर जीतता हुआ 1791 मे श्रीरंगापटट्म तक पहुँच गया। 1792 मे श्रीरंगापटट्म की संधि हुई। इसके अनुसार टीपू को अपना आधा राज्य अंग्रेजों, मराठो तथा निजाम को देना पडा। इस युद्ध मे टीपू को बहुत क्षति हुई परन्तु उसने अपना अस्तित्व पूर्णतः समाप्त होने से बचा लिया।

1781 में लार्ड वेलेस्ली गर्वनर जर्नल बन कर भारत आया। वह एक साम्राज्यवादी गर्वनर जनरल था। उसकी नीति थी कि या तो टीपू को समाप्त कर दो या अपने अधीन कर लो। इसके लिए वह मैसूर से सहायक।संधि करना चाहता था। परन्तु टीपू इसके लिए इच्छुक नही था। उसने टीपू पर अंग्रेजों के विरूद्ध षडयंत्र रचने का आरोप लगाया। तथा 1799 मे टीपू के विरूद्ध सेना भेज दी। टीपू श्रीरंगापट्टम मे युद्ध करता हुआ मारा गया। अंग्रेजो ने तटीय प्रदेश अपने साम्राज्य मे मिला लिए, कुछ प्रदेश निजाम को दिए तथा शेष मैसूर राज्य वाड्यार वंश को सौप दिया, जिससे हैदर अली ने राज्य छीना था। तथा मैसूर ने सहायक संधि स्वीकार कर ली।

3.2.2. मराठो से संघर्ष

पेशवा नारायण राव की मृत्यु के पश्चात् रघुनाथ पेशवा बनना चाहता था। परन्तु नारायण राव के मरणोपरान्त उत्पन्न हुए पुत्र के कारण वह पेशवा नहीं बन सका। रघुनाथ राव ने अंग्रेजो से सूरत (1775) की संधि कर ली, ताकि अंग्रेज पेशवा बनने मे उसकी सहायता करे। परन्तु नाना फडनवीस के नेतृत्व मे मराठा सरदारो ने इसका विरोध किया। प्रथम आंग्ल–मराठा युद्ध इसी कारण आरम्भ हुआ। महादजी सिंधियां के प्रयास से 1782 मे सालाबाई नामक स्थान पर मराठा और अंग्रेजो में संधि हो गयी। दोनो ने एक दूसरे के विजित क्षेत्र वापिस कर दिए।

मराठो ने सालसेट पर अंग्रेजो का अधिकार स्वीकार कर लिया और अंग्रेजो ने माधव राव नारायण को पेशवा मान लिया।

यह व्यवस्था 20 वर्षों तक बनी रही। दोनों को एक दूसरे की शक्ति का अहसास हो चुका था। इन 20 वर्षों मे मराठो के पारस्परिक वैमनस्ता के कारण खराब हो चुकी थी। 1795 में पेशवा माधव राव नारायण की मृत्यु के पश्चात् बाजीराव द्वितीय पेषवा बना। 1800 ई0 में नाना फडनवीस की मृत्यु के पश्चात् बाजीराव नियंत्रण से मुक्त हो गया, और उसने अपना घिनौना रूप दिखाया। मराठा सरदारों मे झगडे करवाये और शडंयत्र रचे। 1801 मे पेष्वा ने जसवंत राव घेल्कर के भाई की हत्या करा दी। जिससे क्षुब्द होकर होल्कर ने पूना पर आक्रमण कर दिया और सिंधियां और पेशवा की सम्मिलित सेनाओ पराजित कर पूना पर नियंत्रण स्थापित कर लिया। बाजीराव ने भाग कर बेसीन में शरण ली और 1802 मे अंग्रेजो की सहायक संधि स्वीकार कर ली। अंग्रेजो को इसका राजनैतिक लाभ हुआ। अब पेशवा अंग्रेंजो की सहमति के बिना अन्य राज्यो से सम्बन्ध नहीं।स्थापित कर सकता था। सिंधियां और भोसले ने मराठा स्वतंत्रता की रक्षा के लिए कोशिश की। परन्तु वह संगठित अंग्रेजी सेना के समक्ष टिक नही सकें। तथा अंग्रेजो से पराजित होने पर दोनो ने अलग–अलग संधि कर ली। इस समय होल्कर मूक दर्शक बना बैठा था। 1804 मे होल्कर तथा कम्पनी में संघर्ष प्रारम्भ हुआ। जिसकी समाप्ति राजपुर घाट (1805) की संधि से हुईं।

वेलेस्ली के वापस जाने से इस क्षेत्र मे अस्थायी शांति कायम हुई। किन्तु मराठो के आन्तरिक व्यवस्था मे कोई सुधार नहीं हुआ। तृतीय आंग्ल–मराठा युद्ध की शुरूआत हेंस्टिंग के आने से हुई। वह भारत में अंग्रेजो की श्रेष्ठता स्थापित करना चाहता था। हेस्टिंग ने पिण्डारियों के विरूद्ध अभियान से मराठो के प्रभुत्व को चुनौती दी। बाजीराव द्वितीय तथ मराठा सरदारों ने अंग्रेजो का विरोध किया, परन्तु वह असफल रहे। अंग्रेजों ने पेशवा से 1817 मे संधि कर ली, तथा मराठा संघ को समाप्त कर दिया गया। सतारा की गद्दी शिवाजी के वशंज प्रताप सिंह को दे दी गयी। शेष प्रदेश अंग्रेजी राज्य मे मिला लिए गए। इसी प्रकार भोसले तथा होल्कर को भी अपने राज्य का कुछ हिस्सा अंग्रेजो को सौंपना पडा तथा शेष पर अंग्रेजो के नियंत्रण में राज करने की छूट उन्हें मिल गई।

3.2.3. भारतीय राज्यों की असफलता के कारण

मैसूर और मराठा राज्य स्वरूप और संगठन में भिन्न थे, परन्तु दोनों की कमजोरियॉ समान थी। जिनके कारण भारतीय राज्य ब्रिटिश साम्राज्यवाद का सामना नहीं कर सकें।

18वीं शताब्दीं मे भारतीय राज्य परस्पर संघर्षरत रहते थे, जिसने उन्हें कमजोर बना दिया था। अंग्रेजो ने इन राज्यो की आपसी कलह का फायदा उठाया, एक के खिलाफ दूसरे का साथ दिया और अन्ततः अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया।

इसका महत्वपूर्ण कारण था सुसंगठित प्रशासन का आभाव और गुटबंदी। प्रशासन में व्यक्तिगत निष्ठा, जाति का प्रभाव था। प्रशासन मे विभिन्न हितों से जुडे गुट बने थे, जो एक दूसरे का विरोध करते थे। बाहरी आक्रमण के दौरान भी ये गुट संगठित होकर विरोध नहीं कर सकें।

भारतीय राज्यों के पास आय के स्त्रोत सीमित थे। मराठे चौथ और सरदेशमुखी पर निर्भर थे। आय के स्त्रोतो में वृद्धि के लिए भी निरन्तर संघर्ष होते रहते थे।

अन्ततः भारतीय सैन्य संगठन भी असफलता के लिए एक हद तक जिम्मेदार था। यद्यपि मैसूर के शासकों तथा मराठो नें अपनी सेना को यूरोपीय पद्धति पर संगठित करने का प्रयास किया, किन्तु वे नौसिखिये से आगे नहीं बढ सकें।

3.3. सारांश

इकाई में मैसूर और मराठा राज्य पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अधिपत्य की प्रक्रिया को समझ सकेगें। वस्तुतः व्यापारिक हितों के संरक्षण और भारतीय राज्यों के आपसी संघर्ष के कारण अंग्रेजो को भारतीय शक्तियों के मामले मे हस्तक्षेप करने का मौका मिला, और अन्ततः अंग्रेज इन इलाकों पर अपना नियंत्रण स्थापित करने में सफल रहे। भारतीय राज्यों की आन्तरिक कमजोरियों के कारण अंग्रेज सफल रहे।

3.4. शब्दावली

शस्त्रागार	:	शस्त्र बनाने का स्थान
सरदेशमुखी	:	एक प्रकार का कर
नौसिखिए	:	नए सीखे हुए
सहायक संधि	:	कम्पनी तथा देशी राज्यों के मध्य संधि

3.5. स्वमूल्यांकन प्रष्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) मालाबार तट काली मिर्च और इलायची के लिए प्रसिद्ध था।

(ii) हैदर अली ने फ्रांसीसियों की सहायता से डिंडीगुल में शस्त्रागार स्थापित किया।

(iii) हैदर अली ने अंग्रेजों से मंगलौर की संधि की।

(iv) सूरत की संधि अंग्रेजों एवं रघुनाथ राव के साथ हुई।

(v) 1799 में नाना फडनवीस की मृत्यु हो गयी।

(i) (✓) (ii) (✓) (iii) (×) (iv) (✓) (v) (×)

3.6. उपयोगी पुस्तकें

1. हबीवुल हसन – हिस्ट्री ऑफ टीपू सुल्तान
2. एन. के. सिन्हा – हैदर अली
3. ग्रांट डफ – हिस्ट्री ऑफ मराठा

4. जी. एस. सरदेसाई – मेन करन्ट ऑफ मराठा हिस्ट्री

3.7 अभ्यास कार्य प्रश्न

1. अंग्रेजों के विरूद्ध भारतीय असफलता के क्या कारण थे।
2. देशी राज्यों पर अंग्रेजों ने कैसे सर्वोच्चता स्थापित की।
3. आंग्ल मैसूर सम्बन्धों का वर्णन करें।
4. अंग्रेजों का मराठों से संघर्ष की विवेचना करो।

इकाई–4

ईस्ट इंडिया कम्पनी एंव क्षेत्रीय राज्य संघर्ष

इकाई की रूपरेखा

4.0. प्रस्तावना

4.1. उद्देश्य

4.2. ब्रिटिश साम्राज्यवाद और क्षेत्रीय राज्य

4.2.1. सिंध

4.2.2. पंजाब

4.3. सारांश

4.4. शब्दावली

4.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

4.6. उपयोगी पुस्तकें

4.7. अभ्यासकार्य प्रश्न

4.0. प्रस्तावना

इकाई–02 व 3 में बंगाल, मैसूर व मराठा राज्यों पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के अधिपत्य का अध्ययन किया। इस इकाई में उत्तर– पश्चिम में स्थिति सीमावर्ती राज्यों पर ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार का अध्ययन करेंगें। 1820 के बाद भारत आये प्रत्येक गर्वनर जनरल ने विस्तारवादी नीति का अनुसरण किया और इसके लिए भिन्न–भिन्न तरीके अपनाये, विस्तार के लिए चाहे युद्ध किये गये या कोई अन्य तरीका अपनाया गया।

4.1. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से साम्राज्य विस्तार की प्रक्रिया समझ सकेंगे।

- ❖ सिंध और पंजाब के ब्रिट्रिश साम्राज्य के अधीन आने की प्रक्रिया समझ सकेंगे।
- ❖ राज्यों पर नियंत्रण स्थापित करने के उद्देश्य को समझ सकेगें।
- ❖ भारत में ब्रिट्रिश साम्राज्य के विस्तार में सहायक परिस्थितियों को समझ सकेंगे।

4.2. ब्रिटिश साम्राज्यवाद और क्षेत्रीय राज्य

इस इकाई में बंगाल,मैसूर और मराठों को बाद सिन्ध और पंजाब है। शेष

रह गये थे जो अभी तक साम्राज्य का अंग नही बने थे। जहाँ तक अवध और रोहेलखंड का प्रश्न है तो वह सहायक संधि या अन्य तरीकों से बिट्रिश सर्वोच्चता के अधीन आ चुके थे। भारत में साम्राज्य के विस्तार को ब्रिटेन की आर्थिक आवश्यकताओं के सन्दर्भ में समझा जा सकता हैं। औद्योगीकरण के परिणामस्वरूप ब्रिटेन को कच्चे माल (कपास) तथा बाजार दोनों की आवश्यकता थी। ब्रिटेन वस्त्र उघोग के लिए कपास अमेरिका से प्राप्त होता था। बदली परिस्थितियों में अमेरिका ब्रिटेन को कपास उपलब्ध नहीं करा पा रहा था। सरकार ने भारत से कपास प्राप्त करने पर ध्यान दिया तथा कपास की आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए रेलमार्गों तथा नदीमार्गो के विकास पर ध्यान दिया।

भारत के अधिकतर क्षेत्र पर राजनैतिक नियंत्रण स्थापित होने से व्यापारिक लाभ के साथ–साथ राजस्व से सेना, सरकार आदि के खर्चें निकाल कर शेष जो बचता था वह भी लाभांश माना जाता था।

4.2.1 सिंध

18 वी0 शताब्दी में सिंध में कल्जौरा सरदारों का राज था। 1783 में बलूचिस्तान के वालपुर वंश के भीर फतह अजी बां ने सिन्ध पर प्रभाव स्थापित कर दिया। इसकी मृत्यु के पश्चात् सिंध चार राज्यों में बँट गया। ईस्ट इंडिया कम्पनी ने बट्टा में अपना गोदाम स्थापित किया। जिसे राजनैतिक अर्थवस्था के कारण बंद करना पड़ा।

1798 में जब नेपोलियन ने भारत पर आक्रमण की योजना बनाई तब सिंध के सामरिक महत्व को समझते हुए ईस्ट इंडिया कम्पनी ने सिंध के अमीरों के साथ एक संधि कर ली जिसके अनुसार वे फ्रांसीसियों को अपने राज्य में बसने नहीं देगे। इसके पश्चात् सिंध के व्यापारिक और नौगम्यता महत्व को समझते हुए सर अलेक्जेन्डर बर्न्ज को सिंध नदी के महत्व का आंकलन करने के लिए भेजा। बहाना यह था कि महाराजा रणजीत सिंह के लिए उपहार ले जा रहे है।

1831 में महाराजा रणजीत सिंह ने विलियम बेंटिक से रोपड में गेंट के समय यह प्रस्ताव रखा कि सिंध को जीत कर आपस में बाँट लेते है। बैटिंक ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया। परन्तु उसने 1832 में सिंध के अमीरों को एक संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए बाध्य किया। इसके अनुसार सिंध नदी व्यापारियों और पर्यटकों के लिए बोल दी जायेगी। किन्तु नदी मार्ग का उपयोग युद्धपोतों के लिए नहीं किया जायेगा। 1834 में पूरक संधि द्वारा आयात निर्यात की दरें तय कर दी गयी। 1838 में एक और की गयी जिसमें अमीरों को हैदराबाद में रेजीडेंट रखने पर बाध्य किया गया।

अफगान युद्ध के दोरान संधि का उल्लंघन करते हुए सिर्फ सिंध नदी से सेना भेजी गयी बल्कि अमीरों पर दबाव डालकर धन भी किया गया।

1842 जार्ज एलनबरो भारत का गर्वनर जनरल बना। उन्होने अफगानिस्तान से सेना वापस बुला ली। अफगानिस्तान युद्ध से खोई हुई प्रतिष्ठा को वह पुनः स्थापित करना चाहता था। इस युद्ध से सिंध का व्यापारिक और सामरिक महत्व भी अधिक स्पष्ट हो गया था। एलनबरो ने सिंध के प्रश्न पर अधिक सक्रिय नीति का अनुसरण किया। उसने आइट्रम के स्थान पर नेपियर को सैनिक तथा असैनिक अधिकार दे कर सिंध भेजा। नेपियर ने अमीरों पर विश्वासघात का आरोप लगाया और अमीरों पर नयी संधि के लिए दवाब डाला। नेपियर की आक्रमक नीति के कारण बलूचों ने विद्रोह कर दिया। नेपियर ने बलूचों को मिआनी तथा दाबो के

स्थान पर पराजित किया। अगस्त 1843 तक समस्त सिंध अंग्रेजी साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया।

4.2.2 पंजाब

सिंध पर अधिकार करने के पश्चात् पंजाब ही ऐसा क्षेत्र था जो ब्रिटिश साम्राज्य से बाहर था। अग्रजों की ललचाई दृष्टि पंजाब पर थी। महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु के पश्चात् पंजाब की राजनैतिक अस्थिरता ने शीघ्र ही अंग्रजो को अवसर प्रदान कर दिया।पंजाब की गद्दी पर खड़ठा सिंह बैठा। दरबारियों की प्रतिद्वन्दिता के कारण खड़ठा सिंह को बन्दी बना लिया गया उसके पुत्र नैनिहाल सिंह को गद्दी पर बैठा दिया। नौनिहाल सिंह की मृत्यु के पश्चात् चंदाकौर अपने मावी पौत्र की और से राज करना चाहती थी जिसे एक गुट का समर्थन प्राप्त था। डोगरा बंधुओं ने रणजीत सिंह के पुत्र शेर सिंह को गद्दी पर बैठा दिया। शेर सिंह की धोखे से हत्या कर दी गयी इसके पश्चात् अल्पवयस्क दिलीप सिंह को महाराजा बनाया गया।

पंजाब में व्यापत राजनैतिक अस्थिरता ने अंग्रजों को सुनहरा मौका प्रदान किया। सैना की अनुशासनहीनता और प्रमुख सरदारों के बीच आपसी संघर्ष, पदाधिकारियों के भष्टाचार ने स्थिति और खराब कर दी। सन् 1844 में हार्डिग को गवर्नर जनरल बना कर भारत भेजा गया। उसने सैनिक तैयारियाँ तेज कर दी। सिक्खों ने युद्ध को अवश्यमंभावी जानकर 11 दिसम्बर 1845 में सतलज नदी पार कर अंग्रजी सैना से टक्कर ली। इस युद्ध में मुदकी, फिरोजशाह, बद्दोवाल और अलीवाट की लडाईयाँ अनिर्णीत रहीं। सरबराओं की लडाई निर्णायक सिद्ध हुई। लाल सिंह और तेजासिंह के विश्वासघात के कारण सिक्कों की बहुत क्षति हुई।

1845 की संधि के अनुसार जलंधर दो भाव अंग्रेजों को दे दिया गया। सिक्ख सेना में भारी कमी कर दी दिलीप सिंह को महाराजा बना रहने दिया गया। जम्मू कश्मीर गुलाब सिंह को दे दिया लाहोर में हेनरी लॉरेन्ज के नेतृत्व में ब्रिटिश सेना तैनात कर दी गयी 16 दिसम्बर 1846 को नयी संधि की गयी, जिसके अनुसार रेजीडेन्ट को राज्य के हर विभाग में हस्तक्षेप का अधिकार मिल गया।

अंग्रेज इतने से ही संतुष्ट नहीं थे। उनका उद्देश्य पंजाब को ब्रिटिश साम्राज्य में सम्मिलित करना था। अंग्रेजों को शीघ्र ही अवसर मिला। मुलतान के दीवान मूलराज को 20 लाख रूपये नजराना देने तथा रावी नदी के उत्तर का प्रदेश लाहौर दरबार को सौपने के लिए कहा गया। बदलती परिस्थितियों में मूलराज ने त्यागपत्र दे दिया। काहन सिंह की नया गर्वनर बनाया गया तथा कार्य भार ग्रहण करने के लिए उसके साथ दो अंग्रेज अधिकारी भी गये। अंग्रेज अधिकारियों की उद्दंडता के कारण लोगों ने विद्रोह कर दिया। शीघ्र ही विद्रोह भी भाग पंजाब में फैल गयी।

लार्ड डलहोजी ने सिक्खों को पूर्णतः समाप्त करने का निश्चय किया। जनरल गफ भी सैना ने रावी नदी पार कर रामनगर में अर्निणायक युद्ध लडा। गफ के पश्चात् नेपियर के नेतृत्व में सिक्खों को पूर्णतः पराजित कर दिया गया और अन्ततः पंजाब को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया गया।

4.3. सारांश

इस इकाई में वो प्रमुख क्षेत्रीय शक्तियों सिंध और पंजाब के अंग्रजी साम्राज्य में विलय की प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया है। सामान्यतः विलय

की प्रक्रिया को समझने का प्रयास किया है। सामान्यतः विलय की प्रक्रिया की शुरूआत पूर्व में स्थापित संधियों से ही की जाती थी। कम्पनी ने किसी क्षेत्र का विलय चाहें युद्ध के द्वारा किया है या किसी अन्य तरीके से सबसे पहले वह भारत के क्षेत्रीय राज्यों के साथ व्यापारिक तथा सम्बंध स्थापित करती थी।

4.4. शब्दावली

विस्तारवादी	:	साम्राज्य विस्तार की नीति
औद्योगीकरण	:	उद्योगों का विकास
नौगम्यता	:	नदी परिवहन
सर्वोच्चता	:	सबसे ऊपर

4.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) सर अलेग्जेन्डर बर्न्स को सिंघ नदी के महत्व का आंकलन करने के लिए भेजा।

(ii) महाराजा रणजीत सिंह ने रोपड़ में विलियम बैंटिक से भेंट की।

(iii) 1840 में एलनबरो भारत का गर्वनर जनरल बना।

(iv) 1844 में हार्डिंग भारत का गर्वनर जनरल बना।

(v) 1845 की संधि द्वारा जंलधर दोआब अंग्रेजों को दे दिया।

(i) (✓) (ii) (✓) (iii) (×) (iv) (✓) (v) (✓)

4.6. उपयोगी पुस्तकें

1. डब्लू. एफ. पी. नेपियर – द कन्क्वेस्ट ऑफ सिंध
2. पी. एन. रे – ब्रिटिश पॉलिसी टू वर्ड सिंध
3. ए. सी. वनर्जी – एंग्लो सिक्ख रिलेशन
4. जे. डी. कनिंधन – हिस्ट्री ऑफ सिंक्ख
5. लतीफ – हिस्ट्री ऑफ पंजाब

4.7. अभ्यासकार्य प्रश्न

1. किस कारणों से अंग्रेजों ने क्षेत्रीय राज्यों पर नियंत्रण स्थापित किया।
2. सिंध पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए अंग्रेजों ने क्या कदम उठाए।
3. आंग्ल सिक्ख सम्बन्धों की विवेचना करें।

इकाई–5

भारतीय स्वतन्त्रता संघर्ष की विवेचना

इकाई की रूपरेखा

5.0. प्रस्तावना

5.1. उद्देश्य

5.2. आधुनिक राजनैतिक संगठनों का प्रसार

5.2.1. राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना

(a) उदारवादी युग

(b) अतिवादी युग

(c) गांधी युग

5.2.2. क्रान्तिकारी आन्दोलन

5.2.3. द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान एंव पश्चात् स्वतंत्रता के प्रयास

5.3. सारांश

5.4. शब्दावली

5.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

5.6. उपयोगी/सन्दर्भ पुस्तकें

5.7. अभ्यास कार्य पश्न

5.0. प्रस्तावना

इस इकाई में ब्रिटिश साम्राज्यवाद से भारत के स्वतंत्र होने के संघर्ष का अध्ययन करेंगें। इस संघर्ष ने भारत में जनतांत्रिक विचारो एंव संस्थाओं को लोकप्रिय बनाया। राष्ट्रीयवादी नेताओं नें प्रतिनिधि–सरकार की स्थापना के लिए संघर्ष किया और स्वतंत्रता के पश्चात् वयस्क मताधिकार द्वारा प्रतिनिधि सरकार की स्थापना की।

5.1. उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से स्वतंत्रता के विविध आयामो तथा चरणो को समझ सकेंगें–

- ❖ आधुनिक राजनैतिक संगठन की स्थापना को समझ सकेगें।
- ❖ राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना तथा उसके विभिन्न चरणों में अपनाये गये तरीको को समझ सकेगें।

- ❖ क्रांन्तिकारी आन्दोलनो की भूमिका को समझ सकेगें।
- ❖ द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् की गतिविधियो को समझ सकेगे।

5.2. आधुनिक राजनैतिक संगठनों का प्रसार

ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत विभिन्न कारणो यथा (अंग्रेजो द्वारा भारत का एक जैसा शोषण, यातायात के आधुनिक साधन, आधुनिक शिक्षा, प्रेस, राष्ट्रीय साहित्य, सामाजिक धार्मिक सुधार आन्दोलन, आदि) से भारत में राष्ट्रीयता की भावना का उदय हुआ। संगठित आंदोलनो के रून में भारतीय राष्ट्रीयवाद के चिन्ह 19वीं सदी मे दिखाई देते है। भारत में राजनैतिक उद्देश्यों के लिए 1851 में ब्रिटिश इंडिया एसोसिएशन की स्थापना हुई। इससे पूर्व 1828 मे ब्रह्म समाज की स्थापना में राष्ट्रीय चेतना धार्मिक रूप में दिखाई देती है। 1838 मे कलकत्ता मे जमींदार एसोसिएशन या लैंडहोल्डर सोसाइटी बनाई, जिसका उद्देश्य जमींदारो के हितों का संरक्षण करना था। मद्रास और बंबई में भी ऐसी संस्थाये बनायी गयी। दादा भाई नौरोजी ने लंदन मे ईस्ट इंडिया एसोसिएशन की स्थापना की, इसकी शाखाये भारत के प्रमुख नगरो मे थी। रानाडे ने पूना सार्वजनिक सभा बनाई जो महाराष्ट्र में राजनैतिक रूप से सक्रिय थी। 1884 में मद्रास में महाराज जमा तथा 1885 में बम्बई प्रेसीडेंसी एसोसिएशन की स्थापना हुई। इसी बीच कलकत्ता में 1875 में शिशिर कुमार घोष ने इंडियन लीग बनाई जिसका उद्देश्य लोगो में राष्ट्रीयता की भावना जगाना था। 1876 मे इंडियन लीग का स्थान इंडियन एसोसिएशन ने ले लिया। इसकी स्थापना आनंद मोह बोस और सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने की थी।

इंडियन एसोसिएशन को अखिल भारतीय रूप देने की कोशिश की गयी। शिक्षित जागरूक भारतीय बहुत दिनों से अखिल भारतीय संगठन की जरूरत महसूस कर रहे थे। अतः 1883 में कलकत्ता में इंडियन एसोसिएशन के प्रयत्न से इंडियन नेशनल कान्फ्रेंस का पहला सम्मेलन हुआ। इसमे विभिन्न क्षेत्र से आये लोगो ने भाग लिया। सम्मलेन में ब्रिटिश सरकार से मॉग की गयी कि सिविल सर्विस परीक्षा भारत में भी हो, आयु बढाकर 22 वर्ष कर दी जाए, प्रतिनिधि विधान सभाओ की स्थापना की जाए, आदि। यह सम्मेलन अखिल भारतीय राष्ट्रीय संगठन की स्थापना की ओर एक कदम था। दूसरी इंडियन नेशनल कान्फ्रेंस 1885 में कलकत्ता में हुई।

5.2.1 भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थपना

भारत में राष्ट्रीय संस्था की आवश्यकता शिक्षित भारतीय वर्ग महसूस कर रहा था। ऐसे समय में ए. ओ. **ह्यूम** ने 1885 ई0 में बुद्धिजीवी वर्ग के सहयोग से इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना की। **ह्यूम** एक अवकाश प्राप्त आई0 सी0 एस0 अधिकारी थे। डब्ल्यू0 सी0 बनर्जी के अनुसार इंडियन नेशनल कांग्रेस डफरिन के दिमाग की उपज थी। डफरिन का विचार था कि एक ऐसी राजनैतिक संस्था हो, जिससे सरकार जनता की भावनाएँ जान सके, जिससे भविष्य में किसी विस्फोटक स्थिति से बचा जा सके। लाला लाजपत राय के अनुसार यह संस्था अंग्रेजी राज की रक्षा हेतु सुरक्षा कपाट (Safety Value) के रूप में कार्य करने के लिए बनाई गई थी।

इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना का उद्देश्य चाहे कुछ भी हो, ह्यूम एक सच्चे उदारवादी थे और वे एक राजनैतिक संगठन की आवश्यकता महसूस करते थे। उन्होने कलकत्ता विश्वविद्यालय के स्नातकों को एक पत्र लिखा–"बिखरे

हुए व्यक्ति कितने ही बुद्धिमान तथा अच्छे आशय वाले क्यों न हों अकेले तो शक्तिहीन ही होते है। आवश्यकता है संगठन की और कार्यवाही के लिए एक निश्चित और स्पष्ट प्रणाली की"।

आधुनिक अनुसंधानो से यह स्पष्ट हो चुका है कि ह्यूम एक जागरूक साम्राज्यवादी थे। वह सरकार और भारतीयो के बीच बढती दूरी से चिन्तित थे। सुरेन्द्र नाथ बनर्जी जिन्होंने मेजिनी और गैरीबाल्डी के विचारो को लोकप्रिय बनाया, के द्वारा इंडियन नेशनल कान्फ्रेंस की स्थापना से, असंतुष्ट थे। उन्होनें एक ऐसी राजनैतिक संस्था की स्थापना की योजना बनाई जो राजभक्त हो। प्रारम्भ में इंडियन नेशनल कांग्रेस अंग्रेज समर्थक बनी रही। इसका पहला अधिवेशन 1885 में बम्बई में व्योमेश चन्द्र बनर्जी की अध्यक्षता में हुआ।

(a) उदारवादी युग (1885–1905) : उदारवादी ब्रिटिश राज के सहयोग से भारत के क्रमिक विकास मे विश्वास करते थे। उन्होनें अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वैधानिक आन्दोलन का रास्ता अपनाया। उदारवादियो का मानना था कि एक ओर जनता को जागरूक करेगें और दूसरी तरफ अंग्रेजो को समझायेगें कि भारतीयो की मॉगें न्यायपूर्ण है। और सरकार को उनकी मॉगें पूरी करनी चाहिए।

उदारवादियों ने यूरोप की लोकतांत्रिक परमपराओ का भारत में प्रचार–प्रसार का समर्थन किया। उन्होनें समाजिक समानता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर बल दिया तथा किसी भी वर्ग के विशेाधिकारो का विरोध किया। उदारवादियों ने साम्राज्यवादी आर्थिक व्यवस्था की आलोचना की। दादा भाई नौरोजी, रानाडे, गोखले तथा रमेश चन्द्र दत्त नें अंग्रेंजो द्वारा भारत के आर्थिक शोषण को भारत की गरीबी का प्रमुख कारण माना। उन्होनें गरीबी हटाने के लिए कुछ सुझाव दिए यथा– भारत का औद्योगीकरण, भारतीय उद्योगो की रक्षा के लिए ऊँचे टैरिफ लगाना आदि।

उदारवादियों ने प्रशासनिक सुधार जैसे, कार्यकारणी और न्याय व्यवस्था करा पृथक्करण, आर्म्स एक्ट को हटाना, सेवाओं का भारतीयकरण, धन बर्हिगमन को रोकना, सैन्य व्यय में कटौती, आदि की मॉग की। उदारवादियों ने प्रतिनिधि संस्थाओं और चुनाव का समर्थन किया तथा कार्यकारणी पर विधायिका के नियंत्रण की मॉग की।

सामाजिक आधार – उदारवादियों का सामाजिक आधार संकुचित था। इनके आंदोलन को शिक्षित भारतीयो का समर्थन प्राप्त था। इस समय नेतृत्व वकील, पत्रकार, डॉक्टर, शिक्षक, जमींदार जैसे बुद्धिजीवी वर्ग के हाथ में था। इसलिए उदारवादी नेताओ को जन राजनीति में विश्वास नहीं था। इसलिए उदारवादी सरकार के खिलाफ जन आन्दोलन बडा नहीं कर सके।

बहुत से विद्वानो ने उदारवादियों की उपलब्धियों की आलोचना की है। यद्यपि उनकी तात्कालिक उपलब्धियां नगण्य थी फिर भी उन्होनें जिन कठिन परिस्थितियों मे यह कार्य किया, यह देखते हुए उनकी उपलब्धियों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। उदारवादी भारतीयो में राष्ट्रीय भावना जगाने में सफल रहें। उन्होनें भारतीयो को राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक हितो के प्रति जागरूक किया। इससे ब्रिटिश राज का नैतिक आधार कमजोर हुआ और राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ।

(b) अतिवाद/उग्रवाद (Radical) (1905–1917) : उदारवादियों की अनुनय–विनय की नीति से कांग्रेस के अन्दर असंतोष उत्पन्न हुआ। इस काल में

कई नेता उभरकर आये जिनकी मॉगे अमूल परिवर्तन के साथ–साथ उग्रवादी थी। नए नेताओं ने आंदोलन का सामाजिक आधार निम्न,मध्यमवर्ग, विद्यार्थी, किसान, मजदूर, तक विस्तारित कर दिया। उदारवादियों से भिन्न उग्रवादियों ने सामाजिक समानता और राजनैतिक स्वतंत्रता को जन्मसिद्ध अधिकार माना। उग्रवादियो ने भारतीय संस्कृति से प्रेरणा ग्रहण की। उनका मानना था कि राजनैतिक दासता से मुक्ति स्वदेशी बहिष्कार और प्रतिरोध से प्राप्त की जा सकती है।

बीसवीं सदी के आरम्भ मे बंगाल का शिक्षित वर्ग यह महसूस करने लगा था कि महज अर्जियों और भाषाणों से सफलता नहीं मिलेगी। इसलिए शिक्षित नौजवान गरम दल की ओर झुके, जिसके प्रमुख नेता बाल गंगाधर तिलक, बिपिन चन्द पाल, अरविन्द घोष, वीरेन्द्र दत्त, लाला लाजपत राय थे। इस आंदोलन को निम्न मध्यमवर्ग से समर्थन मिला। इसका सामाजिक आधार व्यापक था।

(c) गांधीवाद (1919–1947) : इस काल में महात्मा गांधी भारतीय राजनिति के प्रमुख नेता के रूप मे उभरते है। गांधी जी ने अन्याय का खुलकर विरोध करने की नीति अपनाई। गांधी जी के नेतृत्व में कांग्रेस का आंदोलन जनआंदोलन बन गया। गांधी जी राजनैतिक संघर्ष में नैतिक साधनो (सत्याग्रह, अहिंसा) का प्रयोग करते है। उन्होनें असहयोग आंदोलन (1920–1922), सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930–1934), तथा भारत छोडो आंदोलन (1942) के द्वारा ब्रिट्रिश सरकार को यह विश्वास दिलाया कि भारत की स्वतंत्रता न्यायपूर्ण है। भारत पर साम्राज्यवादी नियंत्रण अन्याय है। ब्रिटेन के सम्राट जार्ज षष्ठम् ने अपनी डायरी मे 28 जुलाई 1942 को लिखा था – "उस (चर्चिल) ने मुझे आश्चर्यचकित कर दिया है यह कह कर कि उसके सभी सहयोगी और संसद के तीनो दल युद्ध के पश्चात् भारत को भारतीयो के हाथों में छोडने को उद्यत है।..... .....हमारा भारत पर राज करना गलत हैं और सदैव से भारत के लिए भी गलत रहा है।"

5.2.2. क्रान्तिकारी आंदोलन

क्रान्तिकारी आंदोलन का उद्देष्य विदेशी शासन से भारत को मुक्त कराना था। उनका विश्वास था कि साम्राज्यवाद को हिंसक साधनो से ही समाप्त किया जा सकता है। इसके लिए बम, पिस्तौल का प्रयोग किया क्रान्तिकारियों ने गुप्त सभायें बनाई, हथियार बॉटें, हथियारो के प्रयोग का प्रशिक्षण दिया, यूरोपीय प्रशसको की हत्या करके उनके मनोबल को हतोत्साहित करने तथा प्राासन को ठप्प कर सरकार को उखाड फेकनें का प्रयत्न किया। उन्होनें अपने उद्देष्य की प्राप्ति के लिए हत्या करना, डाका डालना, बैंक, डाकघर तथा रेलगाडियॉ लूटना, आदि तरीको को अपनाया।

यूरोपीयो की प्रथम राजनैतिक हत्या महाराष्ट्र में होती है। दामोदर और बालकृष्ण नें प्लेग समिति के अध्यक्ष श्री रैण्ड की हत्या कर दी। क्योंकि उन्होनें प्लेग ग्रस्त व्यक्तियों के घण्टो में सैनिको को भेजा था।

श्याम जी कृष्ण वर्मा ने लंदन मे इंडिया हाऊस की स्थापना की। जिसके सदस्य हरदपाल, मदनपाल ढीगरा और वी0 डी0 सावरकर थें सावरकर ने नासिक मे 1904 मे मित्र मेला नामक संस्था बनाई जो बाद में अभिनव भारत में परिवर्तित हो गयीं। मदनलाल ने कर्जन वाइलो की हत्या कर दी।

बंगाल मे क्रांतिकारी संगठन अनुशीलन समिति का गठन किया। वारीन्द्र घोष ने ''भवानी मन्दिर'' पुस्तिका मे क्रांतिकारी कार्यों को संगठित करने की

जानकारी दी। 1906 मे क्रांतिकारियों ने डकैतियो के षडयंत्र रचे। 1907 मे बंगाल लेफ्टिनट गर्वनर की हत्या के असफल प्रयत्न किए। 1908 मे मुजफ्फरपुर के न्यायधीश किग्सफोर्ड की हत्या का प्रयास किया गया।

क्रांतिकारी गतिविधियों के दूसरे चरण की शुरूआत असहयोग आंदोलन के असफल होने के बाद हुई। बंगाल मे अनुशीलन और युगान्तर समितियॉ पुनः सक्रिय हो उठी। अक्टूबर 1924 मे सभी क्रांतिकारी दलो का एक सम्मेलन कानपुर मे हुआ। जिसमे सचीन्द्र साचाल, रामप्रसाद बिस्मिल, जैसे पुराने क्रांतिकारियो तथा भगत सिंह, शिव वर्मा, सुखदेव, चन्द्रशेखर आजाद, जैसे नये क्रांतिकारियों ने भाग लिया। इसके पश्चात् हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन (HRA) बना। जिसकी शाखायें बंगाल, बिहार, पंजाब, यू0 पी0 में स्थापित की गई।

क्रांतिकारियों ने 9 अगस्त 1925 में काकोरी में रेलगाडी को लूटा। काकोरी काण्ड में रामप्रसाद बिस्मिनल, अशफाक उल्ला खॉ, लहरी सिंह और रोशन सिंह को मृत्युदंण्ड मिला। 17 दिसम्बर 1928 में लाहौर मे पुलिस अधिकारी साण्डर्स की हत्या कर दी गयी। 8 अप्रैल 1929 में केन्द्रीय विधानसभा में बम फेकें। भगत सिंह, बटुकेष्वर दत्त ने स्वंष्ट को गिरफ्तार करवाया। साण्डर्स काण्ड मे फांसी की सजा दी गई।

बंगाल मे सूर्यसेन ने 1930 मे शस्त्रागार पर कब्जा कर लिया और स्वंय को स्वतंत्र भारत की सरकार का प्रधान घोषित कर दिया। सूर्यसेन पकडे गये और फांसी की सजा हुई। सुभाषचन्द्र बोस ने सिंगापुर मे भारतीय राष्ट्रीय सेना (INA) का नेतृत्व किया और जापान के साथ मिलकर भारत पर आक्रमण कर आजादी दिलाने का प्रयत्न किया।

5.2.3. द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान एंव पष्चात् स्वतंत्रता के प्रयास

द्वितीय विश्वयुद्ध की शुरूआत 1 सितम्बर 1939 में हुई। भारत सरकार ने भारतीयो से विचार विमर्श किए बिना भारत के विश्वयुद्ध मे शामिल होने की घोषणा कर दी। कांग्रेस के अधिकांश नेताओ का प्रश्न था कि एक गुलाम राष्ट्र दूसरे देश की आजादी मे कैसे सहयोग कर सकता है। कांग्रेस की कार्य समिति में विचार–विमर्ष करने के पश्चात् यह तय हुआ कि युद्ध औपनिवेशिक हितों की रक्षा के लिए लडा जा रहा है, अतः किसी भी पक्ष का समर्थन नहीं किया जा सकता।

क्रिप्स मिशन की असफलता से विदित हो गया कि ब्रिटिश सरकार भारत का युद्ध मे सहयोग तो चाहती है, लेकिन सम्मानजनक समझौते के लिए तैयार नहीं हैं। प्रारम्भ में कांग्रेसी नेता फासिस्ट विरोधी युद्ध को कमजोर नहीं करना चाहते थे। किन्तु 1942 के वसंत तक स्पष्ट हो गया कि संघर्ष अपरिहार्य है। गांधी जी ने अंग्रेजो भारत छोडो आंदोलन की शुरूआत की। 9 अगस्त को कांग्रेस के बडे नेताओ को गिरफ्तार कर लिया गया। सरकार कें इस कदम से विद्रोह जैसा माहौल बन गया। आंदोलन को निर्देश देने वाला अब कोई नही बचा था। बलिया में चित्तू पांडे के नेतृत्व में पहली समानान्तर सरकार बनी। मिदनापुर मे जातीय सरकार का गठन किया गया। सतारा की समानान्तर सरकार दीर्घजीवी साबित हुई। भूमिगत गतिविधियॉ इस आंदोलन की प्रमुख विेशेषता थी। संचार माध्यमो तथा सरकारी संसाधनो को नष्ट किया गया। सरकार ने पाश्विक बल सें इसका दमन किया।

कैप्टन मोहन सिंह ने आजाद हिन्द फौज का गठन जापानियों द्वारा सौंपे गये भारतीय युद्ध बन्दियों से किया। आजाद हिन्द फौज की पहली डिवीजन का

गठन 16,300 सैनिको के साथ 1 सितम्बर 1942 में किया गया। इसके दूसरे चरण की शुरूआत सुभाष चन्द्र बोस के 1943 में सिंगापुर पहुॅचने से हुई। बोस सिंगापुर मे 21 अक्टूबर 1943 में स्वाधीन भारत सरकार के गठन की घोषणा की। इस सरकार को जर्मन, जापान, तथा उनके समर्थक देशों ने मान्यता प्रदान की।

जापान के आत्मसमर्पण के बाद आजाद हिंद फौज के सिपाहियों को युद्ध बंदियों के रूप मे भारत लाया गया। सरकार इसके खिलाफ मुक्दमा चलाने जा रही थी। इस मुद्दे ने लोगो की भावनाओ को उत्तेजित किया। लाल किले में इस ऐतिहासिक मुकद्दमे की शुरूआत हूई। भूलाभाई देसाई के नेतृत्व में सप्तू, काटजू, आसफ आली ने सिपाहियों का बचाव किया। सरकार की इस कार्यवाही के खिलाफ जन आक्रोश भिन्न–भिन्न रूपों मे व्यक्त हो रहा था। सभी राजनैतिक दलो ने सिपाहियों का समर्थन किया। यहॉ तक कि सैनिक भी आजाद हिन्द फौज के प्रति नरमी बरते जाने के पक्ष मे थे। वास्तविक स्थिति देखते हुए सरकार ने नीति संशोधित कर ली।

1945–1946 की घटनाओ जैसे राशिद अली के खिलाफ मुकदमा, नाविको का विद्रोह, ने राष्ट्रवादी भावनाओ को उभारा। इन घटनाओं मे छात्रो के साथ–साथ देशवासियों की सहानुभूति और समर्थन मिलता है। इन विद्राहो की शुरूआत किसी राजनैतिक दल ने नहीं की थी। यह आंदोलन स्वतः स्फूर्त थे।

5.3. सारांश

इस इकाई में भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष की विवेचना की गयी है। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त युवा वर्ग की अपेक्षा तथा इंग्लैण्ड में कार्यरत् जनता की संस्थाओं की भारत में स्थापना की मांग धीरे – धीरे राष्ट्रीय आन्दोलन के रूप में उभर कर पूर्ण स्वतत्रंता की मांग के रूप में स्थापित हो गयी। गांधी जी के नेतृत्व में कांग्रेस आम जन की पार्टी बन गयी और जन आन्दोलनों के परिणामस्वरूप 1947 में भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र बना।

5.4. शब्दावली

1.	जनतांत्रिक संस्था	–	लोक प्रतिनिधित्व की संस्था
2.	उदारवाद	–	उदार नीति के अनुसार
3.	उग्रवादी	–	उग्र नीति का अनुसरण करने वाले
4.	सत्याग्रह	–	सत्य के लिये आग्रह

5.5. स्वमूल्यांकन प्रश्न

निम्नलिखित कथनों पर (✓) या गलत (×) का चिन्ह लगाइए।

(i) मद्रास महाजन सभा की स्थापना 1884 में हुई।

(ii) भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना कलकत्ता में हुई।

(iii) भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रथम अध्यक्ष ए० ओ० ह्यूम थे।

(iv) विपिन चन्द्र पाल उग्रवादी दल के नेता थे।

(v) भारत छोड़ों आन्दोलन 1942 में आरम्भ हुआ।

(i) (✓) **(ii)** (×) **(iii)** (×) **(iv)** (✓) **(v)** (✓)

5.6. उपयोगी पुस्तकें

1. बिपिन चन्द्रा त्रिपाठी एंव डे – फ्रीडम स्ट्रगल
2. आर. सी. मजूमदार – हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ द इंडियन पिपुल IX,X,XI
3. अनिल सील – द इमरजेन्स ऑफ इंडियन नेषनलिज्म
4. तारा चन्द – हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया

5.7. अभ्यास कार्य प्रश्न

1. आधुनिक राजनैतिक संगठनों के विकास का वर्णन करें।
2. उदारवादी नेताओं की उपलब्धियों का वर्णन करें।
3. भारत में क्रांतिकारी आंदोलन के उभार की परिस्थितियों का वर्णन करें।
4. किस प्रकार कांग्रेस गांधीवादी युग में आम जन से जुड़ गयी विवेचना करें।